ISSN 2319-5304

National Mission for Manuscripts

कृति रक्षण

राष्ट्रीय पाण्डुलिपि मिशन की द्वैमासिक पत्रिका

Kriti Rakshana

Bi-monthly publication of the National Mission for Manuscripts

Vol. 9 No. 6
June - July, 2014

Swami Vivekananda says in Future of India (Lecture),

"My idea is first of all to bring out the gems of spirituality that are stored up in our books (Manuscripts) and in the possession of a few only, hidden as it were, in monasteries and in forests – to bring them out; to bring the knowledge out of them, not only from the hands where it is hidden, but from the still more inaccessible chest, the language in which it is preserved, the incrustation of centuries of Sanskrit words. In one word, I want to make them popular, I want to bring out these ideas and let them be the common property of all, of every man in India, whether he knows the Sanskrit language or not"

Page 290, (Lectures from Colombo to Almora),
The Complete Works of Vivekananda,
vol III, Mayavati Memorial Edition, Calcutta

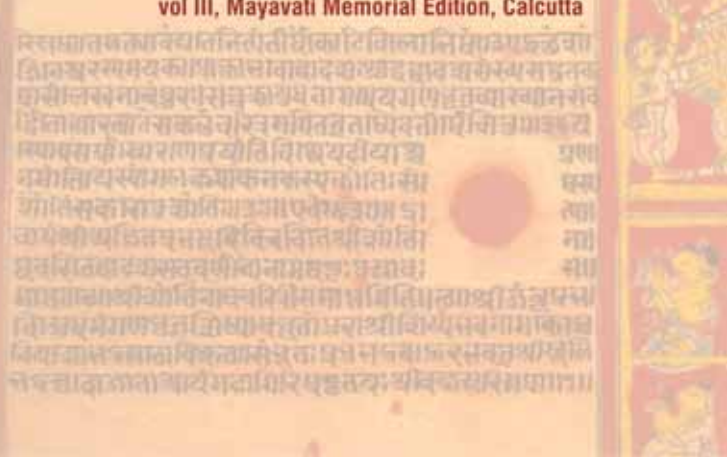

"One of our major misfortunes is that we have lost so much of the world's ancient literature – in Greece, in India and elsewhere... Probably an organised search for old manuscripts in the libraries of religious institutions, monasteries and private persons would yield rich results. That, and the critical examination of these manuscripts and, where considered desirable, their publication and translation, are among the many things we have to do in India when we succeed in breaking through our shackles and can function for ourselves. Such a study is bound to throw light on many phases of Indian history and especially on the social background behind historic events and changing ideas ."

Pandit Jawaharlal Nehru, *The Discovery of India*

Editor
Mrinmoy Chakraborty

Publisher:
Director, National Mission for Manuscripts
11 Mansingh Road
New Delhi - 110001
Tel: +91 11 23383894
Fax: +91 11 23073340
Email: director.namami@nic.in
Website: www.namami.org

The views, opinions and suggestions expressed in the *Kriti Rakshana* are strictly those of the authors and not necessarily those of the editor or the publisher.

Designing and Printing: Current Advertising (P) Ltd.

Editorial

National Mission for Manuscripts (NMM) was established by Shri Atal Bihari Vajpayee-led Government in the year 2002 to document, conserve, digitize and disseminate manuscripts which are the treasure trove of the literary and cultural heritage of India. Since then the NMM is functioning under Ministry of Culture as a mission (in project mode) with only Planned Grant made available by the Ministry. Initially, NMM was established for five years and subsequently extensions were given twice, the latest one is going to be ended in 2017.

As per an official assessment made by the NMM, more than half of the total manuscripts available in the country were destroyed after India got independence and before the NMM has been established. After its establishment, despite limited resources NMM has done a lot to materialize the vision of Shri Atal Bihari Vajpayee and other great visionaries of the country whose initiatives led to the establishment of this organization.

Among all the countries in the world, India has the largest number of manuscripts. As per the assessment of the NMM, at present India has nearly one crore manuscripts available in temples, mathas, gurdwaras, public and private repositories and individual collections. Working through its more than 400 centres established at the nook and corner of the country, NMM has so far collected detail information on 36 lakh manuscripts and digitized nearly two crore pages of manuscripts, besides pursuing other activities like conservation and publication.

Behind the success of the NMM is the cooperation of the people of India in general. On the other hand, the very purpose and scope of the organization are at the root of the popularity it has gained all over the nation. Today, NMM is in the forefront among all the organizations engaged in heritage conservation in this country. It appears; NMM was established as a mission but has emerged as a movement.

Though the achievements of the NMM are undoubtedly very great and rare, but there is little scope for complacency. The nature of the responsibility entrusted with the NMM is perennial in character. Conserving manuscripts is a continuous process, digital library needs a permanent set up, research and publication of manuscripts is also a never-ending process considering the number and importance of the manuscript resources we have. Keeping in mind the vast manuscript resources of this country and the benefit this nation can reap through exploring these resources, there is a need for a permanent organization with considerable autonomy. At least to provide our country with an efficient, convenient and rich research infrastructure, developing NMM as an ideal autonomous organization is indispensable. Though similar such organization is absent in Western countries, India can reasonably set a precedence to be followed by other countries of the world.

Editor

Contents

1. 'प्राचीन काल में लेखन का आधार : स्याही 03
   श्री संजय लाल साह

2 भारतीय संस्कृति के विकास में जैन शास्त्र–भण्डारों का योगदान 09
   प्रो. फूलचन्द जैन प्रेमी

3. Rare Manuscripts of *Shah Nama* in Rampur Raja Library Collection: A Study 14
   Prof. S.M. Azizuddin Husain

Others
NMM: Summery of Events

प्राचीन काल में लेखन का आधार : स्याही

संजय लाल साह

यह लेख भारत, विशेषकर उतराखंड के संदर्भ में स्याही के महत्व को रेखांकित करने का प्रयास है। निआर्कस और कर्टियस द्वारा दिया गया कपड़े और भूर्जपत्र पर लेखन का संदर्भ यह सूचित करता है कि भारतीयों द्वारा चौथी शती ई.पू. में स्याही का प्रयोग किया जाता था। लिप् धातु से निश्पन्न 'लिपि' शब्द पाणिनि के व्याकरण(पॉचवी ई.पू.) में मिलता है और अशोक के अभिलेख इसी ओर संकेत करते है। स्याही से लिखित एक सबसे प्रारंभिक पाण्डुलिपि खरोष्ठी में 'धम्मपद ' की खोतान प्रदेश से मिली है। पाषाण पर स्याही से चित्रित किये गये कई लेख भारत के विभिन्न भागो से उपलब्ध हुये है (कृष्णदत्त वाजपेयीः भारतीय पुरालिपि विद्या, पृ 84)।

जैनों की मान्यता है कि कश्यप ऋषि के वंशज राजा इक्ष्वाकु के कुल में नाभि नामक राजा हुआ। उसकी रानी मरुदेवी से ऋषभ नामक पुत्र उत्पत्र हुआ। यह ऋषभ ही नाभेय ऋषभदेव नाम से जैनों में आदि तीर्थंकर माने जाते है। कहते हैं कि आदिनाथ ऋषभदेव से पूर्व पृथ्वी पर वर्षा नहीं होती थी, अग्नि की भी उत्पत्ति नहीं हुई थी,कोई कंटीला वृक्ष नहीं था और संसार में विद्या तथा कुशल व्यवसायों का नाम भी नहीं था। ऋषभ ने मनुष्यों को तीन प्रकार के कर्म सिखायें–1 असिकर्म अर्थात् युद्ध विद्या, 2 मसिकर्म अर्थात् स्याही का प्रयोग करके लिखने–पढ़ने की विद्या ,और 3 कृषि कर्म अर्थात् खेती–बाड़ी का काम। इसे चातुर्वर्ण्य व्यवस्था का ही रुप माना जा सकता है । अन्तिम तीर्थंकर महावीर का निर्वाण विक्रम संवत् से 470 वर्ष पूर्व और ईसा से 546 वर्ष पूर्व माना गया है । कहते है कि इससे 3 वर्ष आठ मास और दो सप्ताह बाद पॉचवे आरे का आरम्भ हुआ है जो 21 हजार वर्ष तक चलेगा। इससे मशी कर्म के आरम्भ का अनुमान लगाया जा सकता है(सत्येन्द्रः पृ 52)

लेखनी एक सामान्य शब्द है, जिसका प्रयोग तूलिका शलाका, वर्णवर्तिका, वार्णिक और वर्णक सभी के लिए होता था। पत्थर और धातु पर अक्षर उत्कीर्ण करने वाली शलाका भी लेखनी है। चित्रांकन करने वाली कुची भी लेखनी है। "The general name of an instrument for writing is lekhani which of course includes the stilus, pencils; brushes, reed and wooden pens is found of ready in the epics.":(Bhuler, G , Indian palaeography, p 147)

डा गौरीशंकर हीराचन्द्र ओझा ने अपनी पुस्तक में कलम शीर्षक से यह सूचना दी "विद्यार्थी लोग प्राचीन काल से ही लकड़ी के पाटो पर लकडी के गोल तीखे मुख की कलम वर्णक से लिखते चले आते है। स्याही से पुस्तक लिखने के लिए नड बरु या बॉस की कलमें लेखनी काम में आती हैं। अजंता की गुफाओं में जो रंगो से लेख लिखे गये है वे महीन बालो की कलमों से लिखे गये होगे। दक्षिणी शैली के ताड़पत्रों के अक्षर कुचरने के लिए लोहे की तीखे गोल मुख की कलम शलाका अब तक काम में आती हैं। कोई कोई ज्योतिषी जन्म पत्री और वर्षफल के खरड़ो के लम्बे हाशिये तथा आड़ी लकीरें बनाने में लोहे की कलम को अब तक काम में लाते है, जिसका उपर का भाग गोल और नीचे का स्याही के परकार जैसा होता है" (ओझा)। भारत में

[1]मसी' का अर्थ डा राजबली पाण्डेय ने बताया है मसलकर बनाई हुई। व्हूलर ने इसका अर्थ चूर्ण या पाउडर बताया है , स्याही के लिए एक दूसरा 'मेला' शब्द भी प्राचीन काल में कहीं –कहीं प्रयोग में आता था। व्हूलर ने 'मेला' की व्युत्पत्ति 'मैला' से मानी है तो वही डा पांडेय ने 'मेला' नही मेल माना है जो मेल से बना है।

स्याही का पर्यायवाची मसी या मशी था यह मशी बहुत पुराना शब्द है और एक गृहसूत्र में देखने को कि कवि बाण और उनके पूर्ववर्ती सुबंधु की कृति वासवदत्ता में भी यह देखने को मिलता है(मुले;2003) प्राचीन काल से ही इन्हीं का उपयोग होता था।'

यो तो ग्रंथ लिखने के लिए कई प्रकार की स्याहियों का प्रयोग होता था। परन्तु सामान्य रुप से लेखन के लिए काली स्याही ही काम में लाई गई। संस्कृत साहित्य में इसे 'मशी'शब्द से व्यक्त किया गया है, काली स्याही के निर्माण में कज्जल का ही सर्वाधिक प्रयोग किया जाता था । पुष्पदन्त विरचित महिम्न स्तोत्र मे लिखा गया हैं।

असितगिरिसमं स्यात कज्जलं सिन्धुपात्रे
सुरतरुवरशाखा लेखनी पत्रमुर्वी ।
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं
तदपि तव गुणानमीशं पारं न यति।।

अर्थात श्वेतगिरि (हिमालय) जितना बड़ा ढेर कज्जल का हो,जिसे समुद्र जितने बड़े पानी से भरे पात्र (दवात) मे घोला जाय,देव वृक्ष (कल्प वृक्ष) की शाखाओं से लेखनी बनायी जाय (जो कभी समाप्त न हो) और समस्त पृथ्वी को पत्र (कागज) बनाकर शारदा (स्वयं सरस्वती) लिखने बैठे और निरंतर लिखती रहे तो भी हे ईश! तुम्हारे गुणों का पार नही है। (ठतवूद ए ॅण्छवजउवद ए जीम ऊीपउदेकलंजं ;पदजतवकनबजपवदद्धए च 4.6द्ध महिम्न ; स्तोत्र का रचनाकाल 9 वी शताब्दी से पूर्व का माना गया है।

सुबन्धुकृत 'वासवदत्ता' कथा मे भी एक उदाहरण मिलता है

'त्वकृते यानया वेदानुभूता सा यदि नमः पत्रायते सागरो लोलायते बह्मा लिपिकरायते भुजगपतिर्वाक्कथकः तदा किमपि कथमप्येके–कैर्युगसहस्त्रैरभि लिख्यते कथ्यते वा। अर्थात् आपके लिए इसने जिस वेदना का अनुभव किया है उसको यदि स्वयं बह्मा लिखने बैठे ,लिपिकार बने,भुजगपति शेषनाग बोलने वाला हो और लिखने वाला इतनी जल्दी –जल्दी लिखे कि कलम डुबोने से सागर रुपी दवात में हलचल मच जाये तो भी कोई एक हजार युग में थोड़ा बहुत ही लिखा जा सकता है(सत्येन्द्र पृ 53)।

पाश्चात्य जगत मे भी प्राचीनम स्याही काली ही विदित होती है । सातवी शती ईस्वी के काली स्याही के लेख मिल जाते है। यह सयाही दीपक के काजल या धुंये से तो बनती ही थी , हाथी–दॅात को जलाकर भी बनायी जाती थी कोयला भी काम मे आता था (The Encyclopaedia Americana vol ,18 p 241) भारत में हस्तलेखों की स्याही का रंग बहुत पक्का बनाया जाता था यही कारण है कि वैसी पक्की स्याही से लिखे ग्रन्थो के लेखन में चमक अब तक बनी हुई है, यह स्याही पानी मे घुलनशील नहीं है और हल्की सी धुप दिखाने पर वापस उसी रुप मे आ जाती है।

भारतीय पाण्डुलिपि विद्या नामक पुस्तक में लेखक ने बताया है कि प्रायः लिखने की स्याही दो प्रकार की होती थी । पहली का प्रयोग पाण्डुलिपियों की नकल करने मे होता था और दुसरी चिटिठयों और दुकानदारो के बहीखातो आदि के लेखन में प्रयुक्त होती थी । सस्ती स्याही का निर्माण दिये की कालिख में गोंद और कत्था मिलाकर होता था, तथा टिकाऊ स्याही तैयार करने के लिये पीपल वृक्ष की राल सफाई से उतार ली जाती थी और पानी मिलाकर कुछ समय के लिये मिट्टी के बरतन मे रख दी जाती थी। इसके बाद इसे आग पर उबाला जाता था । उबालने के समय निश्चित मात्रा में सुहागा और लोध्र मिला दिया जाता था । अन्त में इसे कपड़े से छान लिया जाता था। इस तरह तैयार किये गये द्रव में दिये की काालिख मिलायी जाती थी । कालिख तैयार करने के लिये दियों मे तिल का तेल जलाया जाता था, जिससे द्रव का रंग पर्याप्त काला होता था।(कृष्णदतवाजपेयीःभारतीय पुरालिपि विद्या)

[2]वर्तमान मे संरक्षण के क्षेंत्र में यह सिखाया जाता है कि पाण्डुलिजि आदि को धुप मे रखने से उसका रंग उतर जाता है किन्तु प्राचीन इन हस्तलिखित ग्रन्थो में ऐसा कुछ नहीं पाया गया है

जबकि गौरी शंकर ओझा ने राजस्थान में उपयोग आने वाली स्याही बनाने की विधि इस प्रकार बताई है ''पक्की स्याही बनाने के लिए पीपल की लाख को जो अन्य वृक्षों की लाख से उत्तम समझी जाती है ,पीसकर मिटटी की हॅडिया में रखे हुए जल में डालकर उसक आग पर चढाते है फिर उसमें सुहागा और लोध पीस कर डालते है । उबलते –उबलते जब लाख का रस पानी मे मिल जाता है कि कागज पर उससे गहरी लाल लकीर बनने लगती है तब उसे उतार कर छान लेते हैं। उसको अलता(अलक्तक) कहते है, फिर तिलों के तेल के दीपक के काजल को महीन कपड़े की पोटली में रखकर अलते मे उसे फिराते जाते है जब तक कि उससे सुदंर काले अक्षर बनने न लग जाए''(भारतीय प्राचीन लिपिमाला पृ 155) कच्ची स्याही के संबध में ओझा ने लिखा है कि यह कज्जल, कत्था, बीजाबोर और गोंद को मिला कर बनाई जाती हैं। परन्तु जल गिरने से यह फैल जाती है और इसके पन्ने चिपक जाते है। भोज पत्र में लिखने के लिए ओझा ने लिखा है कि बादाम के छिलको के कोयलों को गोमूत्र मे उबाल कर स्याही बनाई जाती थी (बूलर की काश्मीर रिपोर्ट,पृ 30)। यही बात डॉ राजबली पाण्डेय ने लिखी हैः In Kashmir, for writing on brich-bark, ink was manufactured out of charcoal made from almonds and boiled in cow's urine. Ink so prepared was absolutely free from damage when mss. were periodically washed in water. (पाण्डेयः इंडियन पेलियोग्राफी पृ 85) काली स्याही तैयार करने के भारत में कई तरीके थे कागज पर लिखने के लिए स्याही बनाने का एक आम नुस्खा गुणाकर मुले ने अपनी पुस्तक अक्षर कला में बताया है कि '' बढ़िया लाख को लेकर उसे पीसते हैं फिर उसे हंडिया में रखे हुए पानी मे डालकर आग पर चढाते है। फिर उसमें सुहागा और लोध पीसकर डालते हैं। उस मिश्रण को तब तक उबाला जाता है, जब तक पानी मूल के चौथाई नहीं रह जाता था। तब उसमें तिलों के तेल के दीपक के काजल को मिलाकर उसे सूखने दिया जाता है। उस तरह स्याही काली तैयार हो जाती थी ''(मुले ; अक्षर कला पृ 361) अपनी इस पुस्तक में उन्होनें आगे लिखा है कि ताडपत्र पर शलाका से लिखाने के बाद डाली जाने वाली स्याही नारियल या बादाम के छिलकों को जलाकर प्राप्त किए गए कोयलों से बनाई जाती थी (वही)।

ताडपत्र पर लेखन के लिए स्याही बनाने का एक तरीका भारती जैन श्रमण संस्कृति अने लेखन कला के लेखक ने एक श्लोक के माध्यम से बताया है

निर्यासत पिचुमंद जात् द्विगुणितो बोलस्ततः कज्जल,
संजात तिलतैलतो हुतवहे तीब्रातपे मर्दितम् ।
पात्रे शूल्बमये तथा (?) जलैलक्षि रसैर्भावितः
सदभल्लातक– मृंगराजरसयुतो सम्यग रसोऽयं मशी।

अर्थात नीम का गोंद, उससे दुगुना बीजाबोल,उससे दुगुना तिलों का तेल का काजल ले। तॉबें की कढ़ाई में तेज ऑच पर इन्हें खूब घोंट लें और उसमें जल तथा अलता (लाक्षारस) की थोड़ा थोड़ा करके सौ भावनाएँ दे और अच्छी स्याही बनाने के लिए इसमें शोधा हुआ भिलवा तथा भॉगरे का रस डालें।

कोरडए वि सरावे,अंगुलिआ कोडम्मि कज्जलए।
मद्दह सरावलग्गं, जावै चि (वक) गं मुअइ।
पिवमुंइ गुदेलेसं,खायर गुदै व बीयजलमिस्सं।
भिज्जवि तोएण दढं, मद्दह जातं जलं मुसइ।

अर्थात नये काजल को सरवे (सकोरे) में रखकर ऊँगलियॉ से उसे इतना मलें या रगड़ें कि सरवे से लगाकर उसका चिकनापन छूट जाय। तब नीम के गोंद या खैर के गोंद और वियाजल के मिश्रण में उक्त काजल को मिलाकर इतना घोटें कि पानी सूख जाये फिर बडिया बनाले।

कागज पर लिखने की स्याही बनाने की विधि मे मुनिजी ने बताया है कि

लाख टांक बीस मेल, स्वाग टांक पांच मेल
नीर टांक दो सौ लेई, हांडी में चढ़ाइये,
ज्यों लौं आग दीजे त्यों लौं ओर खार सब के लीजे।
लेदर खार बालबाल पीस के रखाइये

[3]स्त्रियां खासतौर से इसे पांवों और ओंठों में लगाती थी।

मीठा तेल दीय जल, काजल सो ले उतार
नीकी विधि पिछानी के ऐसे ही बनाइये
चाइक चतुर नर लिखके अनूप ग्रन्थ
बांच बांच बांच रीभ रीभ मौज पाइये।

इसके साथ– साथ मुनिजी यह भी कहते है कि 'जिस स्याही में लाख (लाक्षारस), कत्था, लोध पड़ा हो , वह कपड़ा या कागज पर लिखने के लिए उपयुक्त नहीं है या इससे कपड़े एवं कागज तम्बाकू के पत्ते जैसे हो जाते है (भारतीय जैन श्रमण संस्कृति अने लेखन कला, पृ 42)। सत्येन्द्र ने अपनी पुस्तक पाण्डुलिपि विज्ञान मे स्याही बनाने के संबध में कुछ निषेध विधि का भी उल्लेख किया हैं,''यथा कज्जल बनाने के लिए तिल के तेल का दिया ही जलाना चाहिए। किसी अन्य प्रकार के तेल से बनाया हुआ काजल उपयोगी नहीं होता। गोंद भी नीम, खैर या बबूल ही का लेना चाहिए। इसमें भी नीम सर्वश्रेष्ठ हैं। धोंक (धव) का गोंद स्याही को नष्ट करने वाला होता है। स्याही में रींगणी नामक पदार्थ,जिसे मराठी मे 'डौली' कहते हैं, डालने से उसमें चमक आ जाती हैं और मक्खियॉ पास नही आती। जिस स्याही में लाख, कत्था और लोहकीट का प्रयोग किया जाता है उसे ताड़–पत्र आदि पर ही लिखने के काम में लेना चाहिए, कागज और कपड़े पर इसका प्रभाव विपरीत पड़ता है। वह कागज आगे चल कर क्षीण हो जाता है–प्रति लाल पड़ जाती है और ऐसी स्याही से लिखे पत्रों की रगड़ से अक्षर घुलमिल जाते हैं और प्रति काली पड़ जाती हैं (सत्येंन्द्रः पृ 58)''।

कच्ची स्याही और पक्की स्याही का एक उदाहरण कश्मीर मे मिलता है जब एक जालसाज ने कश्मीर के सुप्रसिद्ध लेखक जोनराज के दादा से मात्र एक प्रस्थ भूमि खरीदी जिसकी लिखा पढ़ी हुई। किंतु जालसाज ने क्रय लेख के 'भू प्रस्थमेकं विक्रीतम्' को स्याही से 'भूप्रस्थदशकं विक्रीतम्' कर दिया और बाकी भूमि पर दावा पेश किया। मामला न्यायालय में गया। न्यायधीश ने क्रय–पत्र पर पानी डाला तो जालसाज ने मूल लेख के अक्षरों में जो हेराफेरी की थी वह स्याही धुल गई, और धोखा–धड़ी की पोल खुल गई(थपल्याल:2010 पृ0 25)।

ओ पी अग्रवाल का मानना है कि प्राचीन काल मे संभवतः कार्बन स्याही बनाई जाती होगी । कार्बन स्याही ,प्राचीन मिश्र , चीन, तथा भारत में प्रयोग की जाती थी। यह कालिख को ,चिपकाने वाले पदार्थ के विलयन या गोंद के साथ मिश्रित कर तैयार की जाती थी। कभी–कभी इसे छड़ो में ढालते थे और सुखाते थे। उपयोग से पूर्व छड़ों को पानी के साथ मिलाकर, स्याही तैयार की जाती थी। कार्बन स्याही स्थायी होती है और यह लिखने के लिए प्रयुक्त होने वाली सामग्री पर विपरीत प्रभाव नहीं डालती हैं। इसके साथ– साथ अग्रवाल ने आयरन गॉल स्याही का भी उल्लेख किया है आयरण गॉल एक लौह लवण जैसे फैरस सल्फेट तथा चिपकाने वाले पदार्थ या गोंद को , जल सोखे हुए गॉल के फल के तरल सार में ,जो कि प्रभाव से एक टैनिन है , के साथ घोल कर तैयार की जाती हैं। चूंकि स्याही आइरन के साथ गॉल विलियन की क्रिया द्वारा बनाई जाती है । टैनिन के अन्य स्रोत बबूल की छाल तथा अन्य पत्तियॉ है । ताजी बनाई हुई स्याही में बहुत कम रंग होता है तथा इसे उपयोग नहीं किया जा सकता किंतु रखने पर धीरे–धीरे ऑक्सीकरण होता है, और एक नीला काला रंग विकसित होता है । स्याही का ऑक्सीकरण ,कागज पर लिखने के उपरान्त भर जारी रहता है , इस प्रक्रिया के दौरान स्याही, कागज पर स्वयं को स्थायी रुप से जोड़ लेती है। आइरन गॉल स्याही एक लम्बे समय तक स्पष्ट रहती है किंतु कागज में उपस्थित रसायनों तथा प्रकाश के द्वारा यह काली से भूरी हो जाती हैं (अग्रवालः पृ 15,16)

यशोधर मठपाल ने अपनी 'शरीर यात्रा' नामक पुस्तक में काली स्याही का उल्लेख किया है वह कहते है कि ''लिखने की काली मसि उनके परिवार वाले स्वयं बनाते थे। बहेड़ा, हरड़ और ऑवले को पका कर स्याही बनती थी। पुराने खैर की लकड़ी

[4]ताड़पत्र पर स्याही से कलम द्वारा भी लिखते हैं और लोहे की नोकदार कुतरम्भी से अक्षर कुरेदे भी जा सकते हैं। लिखने के लिए स्याही ही काम आती है पर कुरेदे हूए अक्षरों पर तैयार काला चूर्ण भरा जाता है। समय –समय पर यह विधि दोहरा दी जाती है

के छिल्पटों या टुकड़ो को लोहे की कढाई मे पानी के साथ खूब पका कर फिर एक सप्ताह तक लोहे के संसर्ग से पक्की स्याही तैयार होती थी, जो पॉच सौ साल तक टिकाऊ तथा समय के साथ अधिक चमकीली होती जाती थी। जन्मपत्री के बीच में लाल रंग से लिखने और चित्रों मे भरने के लिए लाल स्याही शायद उदीस की छाल से बनायी जाती थी। तुन के फलों से भी लाल रंग बनता था। हल्दी ,टेसू और तुन के फलों से बसन्ती चटकदार, रंग, अरूस की पत्तियों से भी लाल,हरा तथा रवीण के फलों व हरसिगार के फूलों से नारंगी रंग बनाया जाता था। एकलवीर और किल्मोड़े की जड़ से क्रमश लाल व पीला, धौल के फूलों से लाल, पत्ती व कोपलों से पीला, धनेरे की छाल से लाल, बेल व अनार के फलों के खप्परा से क्रमशः पीला व हरा तथा आंवले को पानी में पका कर कसीस मिलाने से गहरी स्याही तैयार होती थी (मठपालः शरीर यात्रा पृ 8)''। अपनी इसी पुस्तक में मठपाल ने भीमताल के पं देवीदत्त शर्मा का उल्लेख किया है जिसने स्याही बनाने के कई उपाय बताए जैसेः काजल में गोंद मिलाने से काली स्याही बन जाती हैं। हरड़ , बहेड़ा और ऑवले का चूर्ण एक पाव, कसीस हरा एक छटांग पीस कर लोहे की कढाई में तीन सेर पानी डाल कर पकाना चाहिए। जब एक सेर पानी रह जाय तो उतार लेना चाहिए। इसमें नील मिला देने से काली–नीली स्याही बन सकती है। खैर, बॉज उतीस के बाहर का बक्कल निकाल कर जो भीतर का लाल, हिस्सा होता है उसके दो या तीन इंच के लम्बें , चौथाई इंच के मोटे टुकड़े बना कर लोहे की कढाई में कसीस व पानी डाल कर खूब पकाने से कला रंग बन जाता है। कच्चे आमों को या केले की कच्ची फलियों को , अखरोट के दाने के बक्कल को हरड़, बहेड़ा, आंवला, कत्था इनमें से कोई एक या अधिक चीजों को लोहे की कढ़ाई में पानी और तूतिया और कसीस डाल कर पकाने से काली व नीली स्याही बन जाती हैं। वह यह भी बताते है कि उन सब पौधों के छिलकों या रस को पकाने से काली स्याही बनती है जिन पौधों के दाने या डाल को काटने से लोहे के चाकू आदि को काला दाग लग जाता है। टेसू(पलास या ढाक) के फूलों को पकाने से कपड़ा रंगने के काम आने वाला पीला रंग बनता है और उसमे सुहागा मिला दिया जाए तो यह रंग पक्का बन जाता है।(वही)इसी प्रकार स्याही बनाने के विधि पुरे उत्तराखण्ड़ मे अपनायी जाती होगी ऐसा हमारा मानना है क्योकि सेंज गांव अल्मोडा मे हरि दत्त पाठक ने भी हमे यही विधि बतायी कि हरड़ ,आंवला , खैर का कत्था को आपस में मिला कर कूटा जाता था, फिर उसे लोहे के बर्तन मे पकाया जाता था। उसमें उतने ही अनुपात मे सूहागा मिलाया जाता था, फिर उसे सात दिन तक उसी बर्तन में रखते थे।

रंगीन स्याही में लाल स्याही का उपयोग बहुधा हुआ है । इसके दो प्रकार थे –एक अलता और दूसरा हिंगुल । डा़ राजबलि पाण्डेय ने भी इंडियन पेलियोग्राफी में भी इस बात का जिक्र किया है, उन्होने कहा है ''Red ink was mostly used in the manuscripts for making the medial signs and margins on the right and the left sides of the text , sometimes the endings of the chapters ,stops and the phrases like 'so and so said thus' were written with red ink" (पाण्डेयः इंडियन पेलियोग्राफी पृ 85) ओझा ने भी बताया है कि हस्तलिखित वेद के पुस्तकों में स्वरों के चिन्ह, और सब पुस्तकों के पत्रों पर दाहिनी और बायीं ओर की हाशिये की दो–दो खड़ी लकीरें अलता या हिंगुल से बनी हुई होती हैं। कभी–कभी अध्याय की समाप्ति का अंश एवं 'भगवानुवाच','ऋषिरुवाच' आदि वाक्य तथा विरामसूचक खड़ी लकीरें लाल स्याही से बनाई जाती हैं। ज्योतिषी लोग जन्म–पत्र तथा वर्षफल के लम्बे– लम्बे खरड़ों में खड़े हाशिये, आड़ी लकीरें तथा भित्र–भित्र प्रकार की कुण्डलियॉ लाल स्याही से ही बनाते हैं (ओझाः भारतीय प्राचीन लिपि माला पृ 156) । सत्येन्द्र ने अपने ग्रंथ पाण्डुलिपि विज्ञान में बताया है कि पाश्चात्य जगत् में भी लाल स्याही का कुछ ऐसा ही उपयोग होता था। चमकीली लाल

[5]यहॉ कालिख से अभिप्राय काजल से है जो दिए वा आग आदि जलाने से एकत्र किया जाता हो।

स्याही का उपयोग पाश्चात्य जगत् में पुराने ग्रन्थों में सौन्दर्यवर्द्धन के लिए होता था इससे आरम्भिक अक्षर तथा प्रथम पंक्तियॉ और शीर्षक लिखे जाते थे, इसी से वे 'रुबैरिक्स' कहलाते थे और लेखक कहलाता था 'रुबीकेटर'। इसी का हिन्दोस्तानी मे अर्थ है 'सुर्खी'। जिसका अर्थ लाल भी होता है और शीर्षक भी। उधर भारत में लाल के बाद नीली स्याही का भी प्रचलन हुआ, और पीली भी उपयोग में लाई गई। हरी तथा पीली स्याही का उपयोग हुआ पर अधिकाशतः जैन ग्रन्थों में (सत्येन्द्रः पाण्डुलिपि विज्ञान,पृ 59–60)

सोने और चॉदी की स्याही का उपयोग भी पाश्चात्य देशों में तथा भारत में भी हुआ है । साहित्य में भी प्राचीन काल के उल्लेख मिलते है। सोन–चॉदी में लिखे ग्रन्थ भी मिलते है। राजे– महारजे और धनी लोग ही ऐसी कीमती स्याही की पुस्तकें लिखवा सकते थें। ये स्याहियॉ सोन और चॉदी के वरकों से बनती थी । वरक को खरल में डाल कर धव के गोंद के पानी के साथ खरल मे खूब घोटते थे। इससे वरक का चूर्ण तैयार हो जाता था। फिर शक्कर का पानी डाल कर उसे खूब हिलाते थे। चूर्ण के नीचे बैठ जाने पर पानी निकाल देते थे। उसी प्रकार तीन–चार बार धो देने से गोंद निकल जाता था। अब शेष रह जाता था वह स्याही थी (भारतीय जैन श्रमण संस्कृति अने लेखन कला पृ 44) पंडित गौरी शंकर ओझा ने सोने और चॉदी की स्याही के बारे में बताया है कि सोन और चॉदी के वरकों को गोंद के पानी में घोट कर सुनहरी और रुपहरी स्याहियां बनाई जाती है। इन स्याहियों से लिखने के पहिले पत्रे सफेद हो तो उन्हें काले या लाल रंग से रंग लेते है ,फिर कलम से उन पर लिख कर अकीक या कौड़े आदि से घोटते है तब अक्षर चमकीलें निकल आते है ,ऐसी स्याहियों का उपयोग विशेष कर चित्रकार लोग चित्रों मे करते है (ओझाः प्राचीन लिपि माला पृ156) । लाल रंग अलक्तक, लाक्षारस और हिगालू से,पीला हरताल से और सफेद सफेदा से बनता था। इन रंगों के मिश्रण से नारंगी , गुलाबी, नीला आदि रंग बनाते थे। कुछ लोग वंशानुगत व्यावसायिक स्याही निर्माता थे। जैन परम्परा में ऋषभदेव जी ने असि , मसि (स्याही –लेखन) और कृषि का प्रारम्भ किया (थपल्याल 2010)।

असम में खेराज के पौधे को जड़ समेत निकाल कर उसे धोने के बाद कूट कर उसके रस को मिट्टी के बर्तन में एकत्र कर लेते है। उसमें हरी सिलिखा और हरीतकी का भी रस निकाल कर मिला देते है तथा उतनी ही मात्रा में उसमें गो–मूत्र मिला देते है। एकत्र रस को लोहे के बर्तन में उबाला जाता है जिससे मिश्रण गाढा हो जाता है फिर सूती कपड़े से रस को छान कर एकत्र कर लिया जाता है । इसमें फिर दो तीन केचूले जमीन से निकाल डाल देते है केचूए से एक सफेद पदार्थ निकलता है जो कि फॉस्फोरस होता है ,जिससे स्याही पक्की और चमकदार बन जाती हैं। स्याही जब ज्यादा गाढी हो जाती है तब उसमे ओस की बूंदे मिला दी जाती है (गोस्वामी : समरक्षिका)।

तवांग (अरुणाचल प्रदेश) के मोना क्षेत्र में स्याही निर्माण का कार्य आज भी किया जाता है। वहॉ के लोग चीड़ की लकड़ी को जला कर उससे निकलने वाले काजल को एक मिट्टी के बर्तन मे एकत्र कर लेते है तथा उस काजल में फिर मिसरी, पेड़ो और पौधो से निकलने वाले गोंद तथा जौ और पानी के साथ मिलाकर खूब पकाते है इस मिश्रण को अच्छी तरह पकाया जाता है और फिर उसे साथ दिन तक छोड़ देते है। इसमे पानी को गाय के पित्तरस से मिलाया जाता है जिससे स्याही किटाणु रहित हो जाती है (समरक्षिका पृ 183)।

संजय लाल साह
शोध–छात्र, इतिहास विभाग
डी0एस0बी0 परिसर
कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल

---

[6] हरताल गलत लिखे शब्द या अक्षर पर फेर कर उस अक्षर को लुप्त किया जाता था। इसी से मुहावरा भी बना 'हड़ताल फैरना–नष्ट कर देंना।हरताल से पीली स्याही भी बनाई जाती है। कभी –कभी हरताल के स्थान पर सफेदे का उपयोग किया जाता है।

[7] गो मूत्र की क्षारीय प्रकृति उस पदार्थ को कीड़े वह कीटाणु आदि से रक्षा करती है।

[8] ओस की बूदे एक सुनिश्चित तरीके से एकत्र करते है। जो कि अक्टुबर से दिसंबर के महिने में होती है ।खुले मैदान में एक बड़ा कपड़ा लकडी की मदद से फैला देते है तथा उसके निचे मिट्टी का बर्तन रख देते है ओस की बूदे छन कर उसमें एकत्र होती रहती है।

भारतीय संस्कृति के विकास में जैन शास्त्र–भण्डारों का योगदान

प्रो. फूलचन्द जैन प्रेमी

सम्पूर्ण भारतीय संस्कृति, इतिहास, साहित्य, सभ्यता एवं परम्पराओं के विकास एवं समृद्धि में हस्तलिखित प्राचीन शास्त्र भण्डारों का महत्वपूर्ण योगदान है। इनमें भी जैन शास्त्र भण्डारों का योगदान तो अनेक दृष्टियों से अतुलनीय है। क्योंकि जैन शास्त्र भण्डारों ने मात्र जैन शास्त्रों को ही संरक्षित नहीं किया अपितु वैदिक, बौद्ध आदि अनेक परम्पराओं के शास्त्रों को भी पर्याप्त मात्रा में सुरक्षित रखकर समग्र भारतीय संस्कृति के संरक्षण और विकास में बहुमूल्य भूमिका का निर्वाह किया है। कालिदास जैसे अनेक महाकवियों, बौद्ध–दार्शनिकों की दुर्लभ कृतियों को उपलब्ध कराने, उनके प्रामाणिक सम्पादन आदि में जैन शास्त्र भण्डारों के महत्व को कौन नहीं जानता? वस्तुतः इनके माध्यम से ही हमारी समग्र भारतीय संस्कृति, सभ्यता, साहित्य और इतिहास अपने गौरवशाली स्वरूप में विद्यमान है। यदि ये न होते तो हमारे अपने अतीत के विभिन्न समृद्ध पक्षों को कौन सुरक्षित रख पाता? इसलिए तो इस महत्ता को समझते हुए संस्कृत, प्राकृत–पालि, अपभ्रंश आदि अनेक भाषाओं के ज्ञाता इन भाषाओं के अनेक दुर्लभ ग्रंथों के सम्पादक स्वर्गीय डॉ. हीरालाल जी जैन ने षड्खण्डागम (भाग एक) के सम्पादकीय वक्तव्य में लिखा है–

''प्राचीन प्रतिमाएं खण्डित हो जाने पर नई कभी भी प्रतिष्ठित हो सकती है, पुराने मंदिर जीर्ण होकर गिर जाने पर नये कभी भी निर्माण कराकर खड़े किये जा सकते हैं, धर्म के अनुयायियों की संख्या कम होने पर कदाचित् प्रचार द्वारा बढ़ाई जा सकती है। किन्तु प्राचीन आचार्यों के जो शब्द ग्रंथों में ग्रंथित हैं, उनके एक बार नष्ट हो जाने पर उनका पुनरूद्धार सर्वथा असंभव है। क्या लाखों–करोड़ों रुपया खर्च करके भी पूरे द्वादशांग श्रुत का उद्धार किया जा सकता है? कभी नहीं। इसी कारण सजीव देश, राष्ट्र और समाज अपने पूर्ण साहित्य के एक–एक टुकड़े पर अपनी सारी शक्ति लगाकर उसकी रक्षा करते हैं।

अभी तक जिन उपायों से ग्रंथ (पाण्डुलिपियों) की रक्षा होती रही, अबवे कार्यकारी नहीं है। आज के आधुनिक वैज्ञानिक युग में अनेक नई–नई टेकनीकों के द्वारा प्राचीन हस्तलिखित पाण्डुलिपियों को बहुत अच्छी तरह सुरक्षित रखा जा सकता है। वैसे भी साहित्य रक्षा का इससे बढ़कर दूसरा कोई उपाय नहीं है कि इन पाण्डुलिपियों को सम्पादित करके हजारों प्रतियाँ सर्वत्र फैला दी जाये तो किसी भी अवस्था में उनका कहीं न कहीं अस्तित्व बना ही रहेगा।

वस्तुतः हमारी समाज में श्रुतभक्ति–पूजा तक ही सीमित है। इनके संग्रह, सुरक्षा, सम्पादन एवं प्रकाशन की तरफ से हम एकदम उदासीन हैं। जबकि यही साहित्यिक सम्पदा के रूप में हमारे पास जो विपुल धरोहर है, आज उसे सुरक्षित, संरक्षित, सम्पादित और प्रकाशित कर उसके गंभीर अध्ययन की उतनी ही आवश्यकता है, जितनी की रोटी, कपड़ा और मकान की। क्योंकि यही श्रुतसम्पदा हमारी संस्कृति का आधार–स्तम्भ है। प्राचीन शास्त्राों की सहस्त्रों पाण्डुलिपियाँ कुछ प्रसिद्ध शास्त्र भण्डारों में तो हैं ही, साथ ही प्राचीन जैन मंदिरों, जैन पुस्तकालयों और गृहस्थों के निज–निवासों में भी संग्रहीत हैं। किन्तु कुछ को छोड़कर उचित देखभाल एवं सुरक्षा की कमी के कारण, साथ ही नयी पीढ़ी को इनकी महत्ता न समझने के कारण लापरवाही वश नष्ट हो रहे हैं।

प्राचीनकाल से ही हमारे देश के शास्त्रभण्डार बहुत

Kriti Rakshana

ही समृद्ध और विश्वविख्यात रहे हैं। क्योंकि छापाखाना (प्रेस) प्रारंभ होने के पूर्व तक यहाँ ज्ञान–विज्ञान के विभिन्न विषयों के ज्ञानार्जन हेतु शास्त्रों को हाथ से लिखकर उनके प्रचार–प्रसार की परम्परा रही है। इसीलिए सम्पूर्ण देश के कोने–कोने में विविध विधाओं एवं विभिनन भाषाओं में आज भी प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथों की प्रतियाँ विपुल मात्रा में सुरक्षित हैं। विभिन्न शास्त्रों और विद्याओं के अध्ययन हेतु यहाँ विदेशों से भी लोग आते रहते हैं। इसीलिए भी भारत को विश्वगुरू होने का गौरव भी प्राप्त हो रहा है।

सुप्रसिद्ध जर्मन विद्वान मैक्समूलर के अनुसार– सारे संसार में ज्ञानियों एवं पण्डितों का देश भारत ही एक मात्र ऐसा देश है, जहाँ विपुल ज्ञान सम्पदा हस्तलिखित ग्रंथों के रूप में सुरक्षित है।

पाण्डुलिपियों का सम्पादनः एक कसौटी

मुझे तीन चार स्वयं द्वारा तथा दस–बारह अन्यों के सहयोग हेतु पाण्डुलिपियों के सम्पादन कार्य का अनुभव याद आ रहा है। वस्तुतः यह एक बहुत बड़ी तपः साधना है। जिसे बहुत ही धैर्य एवं सावधानी और निःस्वार्थभाव पूर्वक करने की आवश्यकता होती है। इन सबके महत्व का वास्तविक मूल्यांकन भी वही कर पाते हैं, जो इस साधना में प्रवृत्त रहते हैं।

वस्तुतः पाण्डुलिपियों के सम्पादन में सावधानी बहुत अधिक आवश्यक होती है। सबसे बड़ी सावधानी ग्रंथकार के प्रति तटस्थता की रखनी पड़ती है। क्योंकि सम्पादक कभी–कभी संपाद्य ग्रंथ के रचयिता के पाण्डित्य से भावात्मक सम्बंध बनाकर अथवा उसके प्रभाव में आकर अपने अनुसार प्रमुख पाठों को सुधारने के लिए आग्रहबद्ध हो जाता है। किन्तु हमें इस दिशा में बहुत ही विवेकशील तथा तटस्थ होने की आवश्यकता होती है। अन्यथा एक ओर हम मूलपाठ से दूर होते जातो हैं तो दूसरी ओर ग्रंथकार की समकालीन साहित्यिक और भाषिक स्तर तथा स्थिति की वास्तविक जानकारी से हम वंचित रह जाते हैं। अतः हमें उसके यथारूप को यहाँ तक कि उसे वर्तनी दोष के साथ भी कहीं न कहीं सुरक्षित रखना चाहिये। क्योंकि जिसे हम आज दोष या गलती समझ रहे हैं, वह आगे चलकर समझ आने पर ऐसा महसूस होने लगता है कि सम्भवतया वही पाठ सही हो अथवा उस पाठ में कोई रहस्य छिपा हो।

सम्पादन कार्य आरम्भ करने से पूर्व सम्पादित किये जा रहे ग्रंथ की अन्य एक या इससे अधिक पाण्डुलिपियों को यथासम्भव जुटाकर अपने समक्ष रखना सही और सफल सम्पादन कार्य हेतु बहुत आवश्यक है। अलग–अलग स्थानों (क्षेत्रों) की प्रतियाँ हों तो और अच्छा होता है। क्योंकि इससे सही पाठ निर्धारण में बहुत सहयोग मिलता है। साथ लिपिकार द्वारा असावधनीवश छूटे पाठांशों की पूर्ति भी दूसरी प्रति के सहयोग से बहुत अच्छे रूप में हो जाने से ग्रंथ की सम्पूर्णता में बहुत सहयोग प्राप्त होता है। इस सम्पूर्णता से उस ग्रंथ के सम्पादक को जो सुख और संतोष प्राप्त होता है, वह अपूर्व ही होता है।

पाण्डुलिपियों की सुरक्षा

अनेक कष्टों, अभावों और विघ्न बाधाओं को झेलते हुये पाण्डुलिपियों को लिखने का कार्य किया जाता था। अतः लेखक या लिपिकार को उन्हें इसकी लम्बे काल तक सुरक्षित रखने की चिन्ता रहती थी। पाण्डुलिपि का लिपिकार पाठक के समक्ष विद्यमान तो नहीं रहता था, किन्तु उसे सुरक्षित रखने की प्रार्थना पाठक को उस पाण्डुलिपि में इस प्रकार लिख देता था, ताकि वह पाठक उसके महत्व का अनुमान कर उसे अपने प्राणों की तरह उसकी रक्षा हेतु सावधान रहे। इसीलिए अनेक पाण्डुलिपियों के अन्त में यह लिखा मिलता है–

भग्नपृष्ठि कटिग्रीवा, भग्नदृष्टिरधोमुखः।
कष्टेन लिखितं शास्त्रं यत्नेन परिपालयेत्।।

अर्थात इस पाण्डुलिपि को लिखते समय मेरी पीठ, कमर और गर्दन टूट (टेढ़ी हो) गई, निरंतर झुककर और अधुमुख किये रहने के कारण मेरी आँखों में दृष्टिदोष उत्पन्न हो गया और आँखें पथरा गई हैं। इस प्रकार बड़े कष्टपूर्वक यह शास्त्र लिख पाया हूँ। अतः हे पाठकगण, इसकी प्रत्यत्नपूर्वक सुरक्षा करते रहना।

मुख्यतः इन शास्त्रों की निम्नलिखित बाह्य बाधाओं से भी रक्षा रखना–

तैलाद् रक्षेत् जलाद् रक्षेत्, रक्षेत् शिथिल बन्धनात्।
परहस्ते न दातव्यो एवं वदति पुस्तिका।।

अर्थात पूर्वोक्त कठिनाईयों से लिखी गयी इस पाण्डुलिपि तेल एवं जल से रक्षा करते रहना। पाण्डुलिपि को पढ़ने के बाद बांधते समय शिथिल अर्थात ढीला–ढाला बांधने से बचाना अन्यथा उसके पत्र बिखर और टूट जायेंगे। इसी तरह अनाड़ी, अज्ञानी जैसे पराये लोगों के हाथों में भी मत दे देना– यह पाण्डुलिपिरूपी पुस्तिका स्वयं आपसे अनुरोध कर रही है।

पाण्डुलिपियों के गहन अध्ययन और सम्पादन से उस ग्रंथकार के समय के युगानुकुल सामाजिक मूल्यों, चिंतन की दिशाओं एवं गहराईयों, तत्कालीन अनेक परिस्थितियों का ज्ञान प्राप्त होता है। इसीलिए प्राचीन हस्तलिखित पाण्डुलिपियों का विधिवत् अध्ययन, सर्वेक्षण, उनका रख–रखाव, सूचीकरण, प्रतिलिपिकरण करके उन्हें प्रकाशन योग्य बनाना जहाँ अति आवश्यक है, वहीं यह एक युनौती भरा कार्य भी माना जाता है। इसीलिए अज्ञात, दुर्लभ और ह्रासोन्मुख शास्त्रों को सार्वजनिक लाभ हेतु उन्हें प्रकाश में लाया जाता है। क्योंकि ये शास्त्र हमारी बहुमूल्य धरोहर के प्रमुख अंग हैं, जो हमारी पवित्र धार्मिक आस्था, जीवनशैली, संस्कृति, सभ्यता और ऐतिहासिकता को समृद्ध ही नहीं करते, अपितु हमारी उन परम्पराओं की जड़ों को भी सींचते हैं, जो बहुमूल्य धरोहर हमें हमारे पूर्वजों से प्राप्त हुई हैं।

विश्व के सभी जीवों के कल्याण हेतु तीर्थंकरों द्वारा उपदिष्ट अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अचौर्य, अपरिग्रह, इनके साथ की करूणा, त्याग, दया, अनेकान्तवाद, सर्वोदय आदि सिद्धान्तों को लिपिबद्ध करने वाला शास्त्रों का विपुल भंडार सौभाग्य से आज भी उपलब्ध हैं। तीर्थंकरों के बाद हमारे आचार्यों, मुनियों, आर्यिकाओं, श्रावकों एवं विद्वानों ने भी इस देश की तमाम भाषाओं में साहित्य सृजन किया है, जिनमें नैतिक मूल्यों, उच्च आदर्शों संयममार्ग में प्रवृति आदि पवित्र जीवन के तत्व समाहित हैं। इसके प्रचार–प्रसार की आज बहुत आवश्यकता है।

भोपाल के श्री फरहत कुरैशी[1] ने लिखा है कि ''तुलनात्मक धर्म के अध्ययन की दृष्टि से जैनधर्म सदैव रूचि का विषय रहा है। आधुनिक विज्ञान और आयुर्वेद की दृष्टि से भी जैन धर्म का आकर्षण बना हुआ है। आज पूरे विश्व में शाकाहार पर जोर दिया जा रहा है। इस दृष्टि से जैनधर्म में प्रतिपादित आदर्श, सात्विक भोजन और योग के सिद्धांतों से पूरे विश्व का परिचित होना आवश्यक है। क्योंकि विश्व के सबसे अधिक व्यावहारिक और प्रभावशाली धर्मों में जैनधर्म का विशिष्ट स्थान है। भारतीय संस्कृति और वैश्विक समस्याओं के उन्मूलन की दृष्टि से जैनधर्म का योगदान सदैव अनुसंधान का विषय रहा है।

विभिन्न भाषाओं में रचित विपुल जैन साहित्य में ये सब विशेषतायें समाहित हैं। यद्यपि शताधिक जैन शास्त्रभण्डार, जो कि सम्पूर्ण देश के कोने–कोने में विद्यमान है, उनमें उपलब्ध बहुमूल्य शास्त्र अब तक अधिकांश सम्पादित और प्रकाशित हो चुके हैं, किन्तु आज भी पाण्डुलिपियों के रूप में विद्यमान अनेक महत्वपूर्ण ग्रंथ इन कार्यों की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

पुरातन पाण्डुलिपियों की महत्ता वर्तमान साधारण पाठक के लिए भले ही समझ में न आये, परन्तु हस्तलिखित अच्छे या जर्जरित रूप में कागज की इन श्रमसाध्य पाण्डुलिपियों के अन्तर्गत विद्वानों एवं शोधार्थियों के लिए सम्पन्न ज्ञान राशि का कोष छिपा रहता है। वे इनमें से संस्कृति, इतिहास, साहित्य, भाषा, परम्परा एवं सम्यताओं आदि से संबंधित विपुल मात्रा में महत्वपूर्ण जानकारी की खोज प्राप्त कर सकते हैं।

आज हमारे सांस्कृतिक जगत् में जो विचार–वैविध्य व्याप्त हैं, चिंतन की अनेक सारणियाँ आलोकित हैं तथा जिनसे वैचारित सम्पन्नता मिलती है, उसके मूल में हमारे पूर्वजों की हस्तलिखित ग्रंथों के प्रति श्रद्धा की भावना ही है।

इसीलिए पाण्डुलिपियाँ अथवा अप्रकाशित प्राचीन

[1]जैन पुस्तकालय एवं शोध संस्थान में प्रकाशित लेख पृष्ठ 113 प्रका. प्राच्य श्रमण भारती, मुजफ्फरनगर, सन् 2004

ग्रंथ सामाजिक गौरव के प्रमाणिक दस्तावेज माने जाते हैं। क्योंकि उनकी प्रशस्तियों एवं पुष्पिकाओं में पूर्ववर्ती आचार्यों के साथ–साथ उनके समकालीन तथा गुरू–शिष्य परम्परा से अनेक पूर्व आचार्यों का नामोल्लेख, नगर श्रेष्ठियों, राजाओं, सार्थवाहों, जैन मंदिर एवं मूर्ति निर्माताओं तथा विद्वानों आदि से सम्बंधित की तिथियों, तत्कालीन घटनाओं, उपलब्धियों आदि के प्रमाण, ऐतिहासिक महत्व की सामग्री तथा उनके परिचय प्राप्त होते हैं।

आचार्यों, राजाओं आदि के समय निर्धारण में जैन पाण्डुलिपियों का योगदान

भारतीय इतिहास में अनेक भ्रम अभी भी विद्यमान हैं, चाहे वे किसी के काल निर्धारण, महान् व्यक्तित्वों के जीवन प्रसंग अथवा घटनाओं से संबंधित भले ही हों। कुछ लोग अब भी आँख बंद किये हैं। वे नये तत्यों, स्रोतों को देखना– समझना तक पसंद नहीं करते। जबकि उन्हें जैन पाण्डुलिपियों और उनकी प्रशस्तियों, अनेक शिलालेखों में स्पष्ट उल्लेख उपलब्ध हैं। प्रो. राजाराम जी जैन ने अपनी पुस्तक "पाण्डुलिपियाँ एवं शिलालेख" – एक परिशीलन (श्री गणेशवर्णी संस्थान वाराणसी से सन् 2007 में प्रकाशित) पृष्ठ 46–47 में मध्यकालीन अनेक जैन पाण्डुलिपियों की प्रशस्तियों के आधार पर मध्यकाल के अनेक महाराजाओं, नवाबों आदि के शासनकाल आदि का सही समय निकालकर प्रस्तुत किया है, जबकि इतिहास जगत् में इनके विषय में सही तिथियाँ आदि उपलब्ध नहीं हैं। ये इस प्रकार हैं–

क्र.सं.	शासक का नाम	काल विक्रम सं.	शासननगर
1	मुहम्मद शाह	1399	योगिनीपुर, दिल्ली
2.	महमूद शाह	1461	वही (इनका मंत्री हेमराज जैन था।)
3.	मुबादिक शाह	1497	वही
4.	सुल्तान गयासुद्दीन	1533	वही
5.	फिरोजखान	1541–45	लाडनूं एवं हिसार फिरोजाबाद
6.	बहलोल	1542	–––––
7.	इब्राहीम शाह	1577–82	कुरूजांगल, फिरोजाबाद एवं सिकन्दराबाद
8	हुमायूँ	1554	योगिनीपुर, दिल्ली
9.	आलमशाह	1584	कालपी
10.	बाबर	1587	योगिनीपुर, कुरुजांगत
11.	सलीम	1607	–––
12	जहाँगीर	1672–74	बीजबाड़ा, अहमदाबाद
13	शाहजहाँ	1689–92	इन्द्रप्रस्थ, दिल्ली
14	मुलकगीर	1733	दिल्ली
15	आलम	1705	चम्पावती, चुरु
16	नादिरशाह	1797	इसने भारत में भयानक कत्लेआप किया
17	राजा वीरम तोमर	1479	गोपाचल, ग्वालियर
18	मानसिंह	1545–61	अकबरनगर (राजमहल) बंगाल
19	राव रामचन्द्र	1581–83	घट्टमाली नगर एवं चम्पावती
20	राय वीरम राठौड़	1594	चम्पावती
21	रामचन्द्र	1610–12	तक्षकगढ़ दुर्ग (आधुनिक तोडारायसिंह)
22	भारमल कछवाहा	1623	गढ़ चम्पावती

क्र.सं.	शासक का नाम	काल विक्रम सं.	शासननगर
23	महाराज सुरजन सोलंकी	1631	टोंक के समीप
24	राव भगवानदास	1632	चम्पावती दुर्ग
25	पातसाहि अनंगशाह	1745	ढाका (बंगलादेश)
26	राजा कुशल सिंह	1785	झिलाय नगर

ऐतिहासिक दृष्टि से ये उदाहरण तो नमूने के रूप में प्रस्तुत किये गये हैं। इन शास्त्रों में अभी भी ऐसे विपुल तथ्य उपलब्ध हैं, जिनसे भारतीय इतिहास, संस्कृति, कला एवं महान् पूर्वज विभूतियों के जीवन प्रसंगों एवं तिथियों आदि की प्रामाणिक सूचनायें उपलब्ध हो सकती हैं, जरूरत है इनके गहन अध्ययन, अनुसंधान तथा प्रचार–प्रसार की।

ज्योतिष, गणित, भूगोल–खगोल, वास्तु विज्ञान, मूर्तिकला, चित्रकला, रहस्य, अध्यात्म, तत्वज्ञान, योगध्यान, तप, संयम–साधन, तंत्र–मंत्र–यंत्र, छन्द, अलंकार आदि विधाओं के वे शास्त्र इन शास्त्र भण्डारों आदि में उपलब्ध हैं, जिनसे समग्र भारतीय संस्कृति के विकास एवं समृद्धि में इनका बहुमूल्य योगदान है अभी और भी विशेष हो सकता है। किन्तु जैन समाज तो अपने स्तर से इनके संरक्षणादि में पूर्ण समर्पित भाव से कार्य कर रही है, यदि सरकारी स्तर पर भी ऐसे ही गंभीर प्रयास हो जायें तो इन शास्त्रों और शास्त्रभंडारों की महत्ता से सम्पूर्ण देश आश्चर्यचकित हुए बिना नहीं रहेगा।

अपने देश के गुजरात, राजस्थान, कर्नाटक, तमिलनाडु, दिल्ली, मध्यप्रदेश, बिहार, महाराष्ट्र, उत्तरप्रदेश आदि प्रांतों में जैन समाज के सहयोग से स्थापित अनेक अनुसंधान संस्थानों, निजी संग्रहों एवं विद्यालयों–विश्वविद्यालयों के शास्त्र भण्डारों ने इन हस्तलिखित प्राचीन पाण्डुलिपियों के संरक्षण में महनीय योगदान किया है। उनमें जैसलमेर, अहमदाबाद, पालिताना, पाटन, बीकानेर, नागोर, लाडनूं, चुरू, जयपुर, अजमेर, ब्यावर, श्रीमहावीरजी, वाराणसी, आगरा, दिल्ली, इंदौर, बीना, उज्जैन, आरा, वैशाली, सोलापुर, कोल्हापुर, फलटन, बाहुबलि, कारंजा, मैसूर, श्रवणबेलगोला, मूढ़बिद्री अर्हन्तगिरी, कनकगिरी, मद्रास आदि अनेक प्रसिद्ध नगरों में स्थापित जैन शोध संस्थानों एवं शास्त्र भण्डारों ने हमारी इस अमूल्य धरोहर का संरक्षण संवर्धन कर मात्र जैन संस्कृति का ही पोषण नहीं किया, अपितु इन प्रयासों से सम्पूर्ण भारतीय संस्कृति के विकास में इनके बहुमूल्य योगदान को कभी भुलाया नहीं जा सकता।

प्रो. फूलचन्द जैन प्रेमी
निदेशक (Academic), भोगीलाल
लहेरचन्द इन्स्टीट्यूट ऑफ इण्डोलोजी,
दिल्ली – 110036

Kriti Rakshana

Rare Manuscripts of *Shah Nama* in Rampur Raja Library Collection: A Study

Prof. S.M. Azizuddin Husain

Rampur Raza Library, a renowned library established in 1774 AD, by Nawab Faizullah Khan of Rampur, has a very rare collection of manuscripts like *Quran*, ascribed to Hazrat Ali (d.661AD), *Nahjul Balagha* (copy dated 1158 AD), *Diwan-i-Hafiz* (copy dated 1605 AD), *Tarikh-i-Firoz Shahi* (copy dated 1608 AD), *Diwan-i-Khushhal Khan Khatak* (copy dated 1696 AD), Shah Nama (copy dated 1436 AD) and other manuscripts dealing with other subjects.

Shah Nama of Firdausi (940-1020 AD) is the most popular and influential national epic in Iran and other Persian speaking nations. Nizami said -

گوئی پیشینہ دانای طوس کہ آراست زلف سخن چوں عروس

Thomas William Beale writes about Firdausi that, "Abul Qasim Hasan-bin Sharif Shah, a famous Persian poet, sometimes called the Homer of Persia, whose epic poem, called *Shah Nama*, written by order of Sultan Mehmud of Ghazni in 421 AH/1030 AD, is justly celebrated. It contains the legendry annals of the ancient kings of Persia, from the reign of the first king, Kaimurs, to the death of Yazdijard III, the last monarch of the Sassanian race, who was deprived of his kingdom in AD 641, the invasion of Arabs during the *Khilafat* of Umar (634-44 AD), the second Khalif after Muhammed"[1]. Richard N. Frye holds opinion that, "Firdausi grew up in Tus, a city under the control of one of these dynasties, the Samanids, who claimed descent from Sassanid general Behram Chobin. The Samanid bureaucracy used the New Persian language rather than Arabic and the Samanid elite had a great interest in pre-Islamic Iran and its traditions and commissioned translations of Pehlavi texts into New Persian. There are few Arabic loan words in the *Shah Nama*. Abu Masur Abdur Razzaq a *dehqan* and governor of Tus, had asked several local scholars to compile a prose *Shah Nama* which was completed in 957 AD. (Although it no longer survives). Firdausi used it as a source of epic."[2] Cyrus Ghani comments that, "Firdausi has a unique place in Persian history because of the studies he made in reviving and regenerating the Persian language and cultural traditions. Firdausi in fact was a motivation behind many future Persian figures. One such not able figure was Raza Shah Pahlavi (1925-41) who established an 'Academy of Culture in Iran, in order to attempt to remove Arabic and Turkish words from Persian language, replacing them with suitable Persian alternatives"[3]. The tomb of Firdausi which had fallen into decay, was rebuilt between 1928-34, on the orders of Raza Shah which has become a national site. In 1934 Raza Shah Pehlavi organized a ceremony under the title "Firdausi Millenary Celebration" in Mashhad, celebrating thousand years of Persian literature since the time of Firdausi. Scholars from different parts of the world were invited to express their views on the theme. From India, Prof. S. Hadi Hasan,

belonging to AMU, Aligarh, was invited. I have heard that Prof. Hadi Hasan had remarked that, "Earlier poets were remembering the monarchs and here a monarch is remembering a poet." In 1949, Danishgah-i-Firdausi, (Firdausi University) was established in Mashhad.

It is a well established fact that Firdausi was a leading poet in the world of literature. One poet rightly placed the status of three leading poets of Iran.

شعر سہ تن پیمبرانند ہر چند کہ لا نبی لبدے
فردوسی و انوری و سعدی ت و قصیدہ و غزل را

In poetry there are three Prophets, though the Prophethood is closed on Prophet Muhammed. These three are Firdausi, Anwari and Saadi. In the branch of Qasida and Ghazal, they are Firdausi, Anwari and Saadi).

سید را ھماں جاے بگواشتم ں آں گر زیک زخم برداشتم
کہ چوں آسیا شد پریشاں زمین ں بر خرو شیدم از پشت زیں

Anwari, the famous poet of Iran holds Firdausi in a high esteem and says that he was not my teacher and I am a student. In reality he was the lord and I was his slave.

Ibnul Asir writes that though Arabic is such a rich language but it failed to produce a work at per with *Shah Nama*. It is really a Quran of Ajam4. Maulana Shibli Nomani writes that, "Firdausi wrote *Shah Nama* in the light of authentic sources of history of Iran. *Shah Nama* is itself an authentic history of ancient Iran"5. So far as Shah Nama's impact on Iranian society and culture is concerned, Shibli holds the opinion that, "The arches and the walls from Khurasan to Baghdad were reciting the Shah Nama. When people used to assemble in the evening, so a good reciter used to recite the verses of *Shah Nama* in a mellifluous and loud voice. People used to get lost and resulted in their sentimental attachment with their mother land. For generations Salatin (rulers) and Umara (nobles) were quoting the verses of *Shah Nama* in their correspondence with dignitaries and among themselves. The last monarch of the Seljuqi dynasty, Tughril Arsalan, when fallen from horse while fighting in the battle field was badly wounded and was near his end, was reciting the following verses of *Shah Nama*[6].

سید را ھماں جاے بگواشتم ں آں گر زیک زخم برداشتم
کہ چوں آسیا شد پریشاں زمین ں بر خرو شیدم از پشت زیں

It reflects the deep impact of Shah Nama that Arsalan did not have the fear of death which was too near to him and was reciting the verses of *Shah Nama*.

Shibli writes that, "Mehmud Ghaznavi had assigned the project of writing Shah Nama but at the same time Mehmud directed his officials to accommodate Firdausi near *Aiwan-i-Shahi.* He should be provided a *haveli* (a house which is having all the facilities) which should be decorated with weapons and the portraits of *Shahan-i-Ajam* (Rulers of Iran), brave persons and wrestlers of Persia"[7]. Dick Davis holds the opinion that, "Firdausi belonged to the class of *dehqans.* These were the land owning Iranian aristocrats who had flourished under the Sassanid dynasty (224CE/651 CE) the last pre-Islamic dynastic rule of Iran, and whose power, though diminished, had survived into the Islamic era which followed the Arab conquests of the seventh century. The dehqans were intensely patriotic (so much so that dehqan is sometimes used as a synonym for "Iranian" in the *Shah Nama*) and saw it as their task to preserve the cultural traditions of Iran, including legendry tales about its kings"[8]. E.G.

Browne writes that, "If there be any truth in these views to what does the *Shah Nama* owe its great and, indeed, unrivalled popularity, not only in Persia, but wherever the Persian language is cultivated? So far as Persia is concerned, national pride in such a movement to the national greatness – a greatness dating from a remote antiquity The genius of Aryan at the expense of Semitic peoples; and the importance of the contents of the book from the point of view of Mythology and Folk-lore. Yet, when all is said, the fact remains that amongst his own countrymen Firdausi has, on the strength of his *Shah Nama* alone enjoyed from the first till this present clay an unchanging and unrivalled popularity."[9] Though Firdausi belonged to a feudal background and that background played an important role in writing the *Shah Nama* but at the same time Mehmud also providing royal environment so that he should have the same feeling also and in that environment he should compile the *Shah Nama*.

One question which arises is as to why Firdausi thought of writing *Shah Nama* describing the contribution of his pre-Islamic ancestors? Then the other question is that why Mehmud Ghaznavi directed Firdausi to write *Shah Nama*? Why Firdausi or Mahmud did not pay attention for the contributions of Prophet Muhammad or *Khulafa-i-Rashidin* or as is believed that Firdausi was a *rafzi* or a shia, so why he did not write on the tragedy of karbala which took place in 680 AD, in which Prophet Muhammad's grandson Imam Husain, was martyred by Yazid's forces alongwith his kins and companions? Prophet Muhammad wrote a letter to Iranian king Khusrau Parvez and sent it through a messenger. When it was delivered to Khusrau Pervez so he tore that letter into pieces and uttered insulting words against Prophet Muhammad.10 Shah Waliullah considered Sultan Mehmud Ghaznavi Islam's greatest ruler after Khulfa-i-Rashidin. When Firdausi's patron Mansoor bin Muhammad, the *hakim* of Tus died, so Firdausi wrote a marsiya on his sad demise. Even when Firdausi decided to compose *Shah Nama*, so he met Shaikh Muhammed Mashooq Tusi and told him about his project. He said that you start this project and Allah will give you success. But as far as my knowledge goes I did not come across even the verses of *Shah Nama* in the Malfuzat of sufis of India. Even Iranian sufis had interest in Shah Nama. As in India, Urdu poets like Mir Anis, Mirza Dabeer and others devoted their whole time and energy for not writing Shah Nama or *Shah Nama-i-Islam* like Hafeez Jalalandhari but they wrote on Imam Husain. Not only MuslimUrdu poets but even Hindu Urdu poets of India, paid such a tribute to the grandson of Prophet Muhammed. The marsiyas onImam Husain written by Muslims and the Hindus in India in Urdu, is unparalleled inthe laguages such as Arabic, Persian, Turkish, Dari, Pashto etc, spoken in the Muslim world. It is highly surprising and astonishing to note that the first *marsiya* on Imam Husain was written in Iran, by Mohtashim Kashani on the orders of Shah Tehmasp Safavi (1524-76 AD) the ruler of Iran in the late 16th century. Farrukhi wrote a *marsiya* on the death of Mehmud Ghaznavi but not on the martyrden of Imam Husain. These Muslims had completely lost themselves in the monarchy.

I think as far as my knowledge goes no scholar of literature or a historian ever raised this question. After the rise of Islam, in Mecca, Arabs had accepted Islam but they

NMM: Summery of Events

(1st June – 31st July, 2014)

DOCUMENTATION

Additional Information collected during June – July, 2014

Sl. No.	Name of the Contributing Organisation (MRC)	No. of Contributed Data
1.	Mazahar Memorial Museum Bahariabad, Ghazipur, Uttar Pradesh	3,000
2.	Uttaranchal Sanskrit Academy, Near Zila Panchayat Office, Haridwar – 249 401, Uttarakhand	724
3.	Library of Tibetan Works and Archives, Gangchen Kyisong , Dharamshala – 176215, Himachal Pradesh	1,537
4.	Orissa State Museum, Museum Building, Bhubaneswar, Odisha	2,040
5.	Manuscript Library, University of Calcutta Hardinge Building, 1st Floor, Senate House 87/1, College Street, Kolkata-700073, West Bengal	1,210
6.	Sri Dev Kumar Jain Oriental Research Institute, Devashram, Mahadeva Road, Arrah– 802 301, Bihar	1,630
7.	Manipur State Archives, Keishampat, Imphal - 795 001 , Manipur	361
8.	Institute of Tai Studies and Research , Moranhat, Dist. - Sibsagar, Assam	996
9.	Bhandarkar Oriental Research Institute, Deccan Gymkhana, Pune-411 037, Maharashtra	4,621
10.	National Institute of Prakrit, Studies & Research, Shrutakevali Education Trust, Shravanabelagola – 573 135, Dist. - Hassan, Karnataka	3,371
11.	Oriental Research Institute & Manuscripts Library, University of Kerala, Kariavattom, Thiruvananthapuram - 695585, Kerala	1,167
12.	Shri Satshrut Prabhavana Trust, 580, Juni Manekwadi, Bhavnagar - 364001, Gujarat	2,230
13.	Patna Museum, Vidyapati Marg Patna Bihar	2,994
14.	Kundakunda Jnanapitha, 584, M.G. Road, Tukoganj, Indore – 452 001, Madhya Pradesh	3,496
15.	Himachal Academy of Arts, Culture and Languages, Cliff-End Estate, Shimla- 171001, Himachal Pradesh	1,149
16.	Krishna Kanta Handique Library, Gauhati University, Gopinath Bardolai Nagar, Guwahati, Assam	273
	Total:	**30,799**

CONSERVATION

Workshop on 'Preventive Conservation of Manuscripts (Rare Support Materials/ Illustrated Manuscripts) held at Central Library of BHU

A five-day workshop on preventive conservation of manuscripts (rare support materials/ illustrated manuscripts) was organized by the National Mission for Manuscripts in collaboration with Sayaji Rao Gayakwad Central Library of the Banaras Hindu University, from 23rd to 27th June 2014. The workshop was inaugurated on 23rd June in the Seminar Hall of the Academic Staff College, BHU.

On the first day of workshop, Dr. Kirti Srivastava, Coordinator, MCC from NMM, New Delhi delivered a lecture on purpose, objectives and functioning of the NMM. Another resource person, Dr. D. K. Rana, Director, Chinmaya International Foundation Shodha Sansthan, Kerala acquinted the participants with manuscripts and manuscriptlogy through his informative lecture.

On the second day, Mr. Iliyas Ahmad, conservator from NRLC, Lucknow delivered a lecture on causes of bio-deteriorations and biodegradation, indigenous methods and material technology and types of ink, types of manuscripts, etc. He also demonstrated the process of making handmade paper through group activity. The last session was dedicated to practical work.

On the third day, Prof. H.N. Prasad, HoD, Department of Library and Information Sciences, BHU discussed cataloguing of manuscripts and metadata standard. Mr. IIliyas Ahmad discussed in detail the risk preparedness and disaster management. Participants were given practical task to learn disaster management regarding fire and flood. The last session was based on the practical demonstration on documentation of manuscripts.

The sessions held on fourth day consist the lectures of Sri P.K. Pandey, Conservation Scientist from NRLC, Lucknow on the deterioration of manuscripts, indigenous methods for preventive care of documents and practical demonstration of making fungicidal paper and preparation of manuscript and writing styles using different types of inks. He also showed the process of folder making for loose manuscripts and the preparation of manuscripts boxes for palm leaf and paper manuscripts. Dr. D.K. Singh, Dy. Librarian, BHU and Organizing Secretary of this workshop delivered a lecture on Digital Preservation: an overview of standard protocols and formats: a case study of B.H.U.

On the last day of the workshop, Sri P. K. Pandey, Scientist, NRLC presented a lecture and practical demonstration on encapsulation with acrylic sheet and making of starch paste, fungicidal paper and mount board folder for storing fragile manuscripts. He also discussed the problem of termites and its treatment. The participants visited the Bharat Kala Bhawan, BHU for close observation of manuscripts preserved and conserved over there. Another resource person Dr. Dharam Vir Singh, Librarian, Kurukshetra University delivered a lecture on knowledge-management.

The valedictory session was also held on the last day in which the chief guest was Dr. Dharam Vir Singh, Librarian of Kurukshetra University.

PUBLICATION

Books Published (From 1st June to 31st July)

1. Samikshika Vol. VI: Traditional Medicine System in India

National Mission for Manuscripts organizes seminars on various topics related to Indology at different locations of the country. The papers presented in the seminar are collected and brought out under the Samikshika series. In December 2010, the NMM organized a seminar on manuscripts related to Indian traditional medicine system at ORIML, University of Kerala, Thiruvananthapuram. The seminar dealt with different aspects of Ayurveda and its importance to modern society. The main focus of this seminar was on

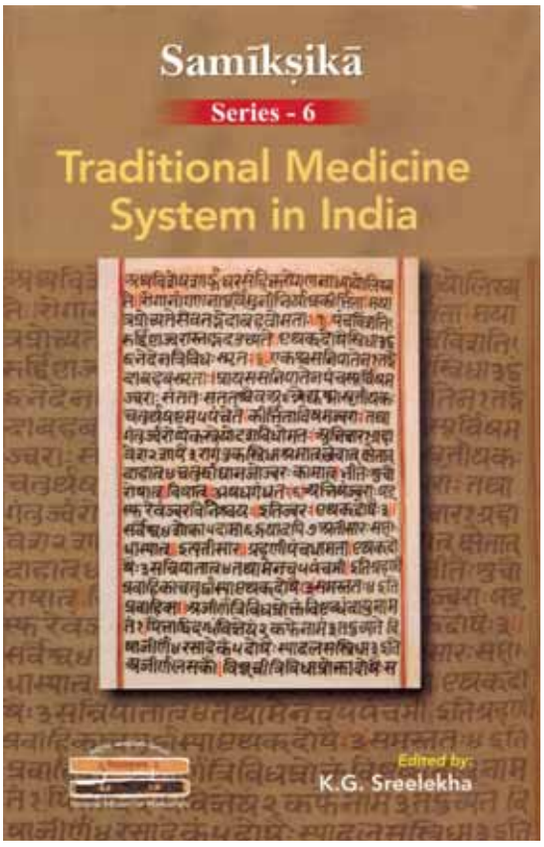

Ayurveda practiced in Kerala, the State which has its own ethnic style of Ayurvedic treatment.

Eighteen papers presented in this seminar have been compiled in this 6th Volume of Samikshika Series. The Volume has been edited by Dr. K. G. Sreelekha. This 170 page book has been co-published by National Mission for Manuscripts and Dev Publishers & Distributors, New Delhi and its price Rs. 300/- only.

2.Prakashika XV: Natyacudamani of Somanarya (With Telegu Commentary)

National Mission for Manuscripts has taken up a project for publishing rare and unpublished manuscriprs in three formats – (a) Facsimile (b) critical edition (illustrated and single copy manuscript) (c) critical edition with annotation and translation. This series has been named as Prakashika.

Prakashika –XV presents the critical edition and English translation of Natyacudamani of Somanarya prepared by Dr. V. Premalatha. The Natyacudamani of Somanarya is an unpublished musicological work written in Sanskrit and is accompanied by a Telugu commentary. The author of this work is Astavadana Somanarya who is said to have lived during the reign of King Acyutarya of the Vijayanagar Empire (1540 AD). The Telugu commentary seems to belong to a later period. The present edition has been brought out with the help of fifteen manuscripts. Though the title reads Natyacudamani, the available text mainly consists of chapters on geeta and vadya and only a few verses relate to natya. Somanarya's work presents some of the traditional musicological views in a tangential

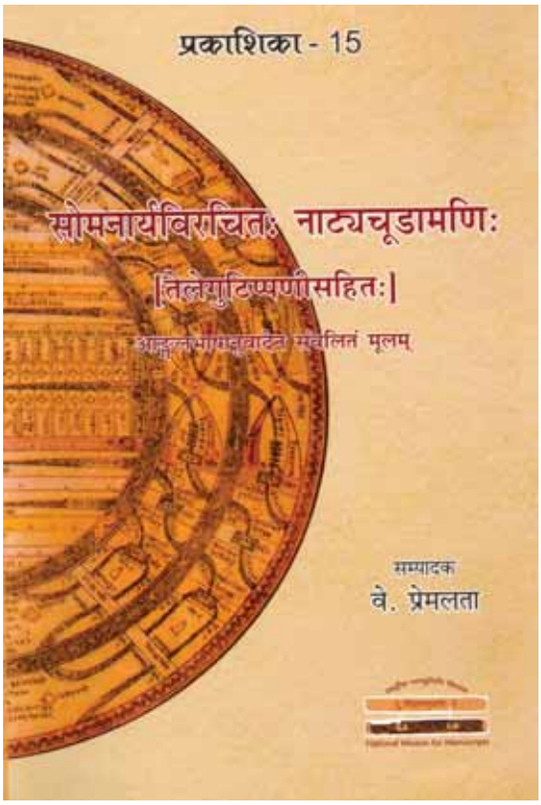

manner and it has made a strong influence on many later works of South India.

This 442-page book has been edited by Dr. V. Premalatha and co-published by National Mission for Manuscripts and Dev Publishers and Distributors, New Delhi. Price – 480/-.

3. Prakashika – 19: Nitiprakashika of Vaisampayana

Nitiprakashika of Vaisampayana is a treatise delineating Nitishastra, that is *rajaniti* and

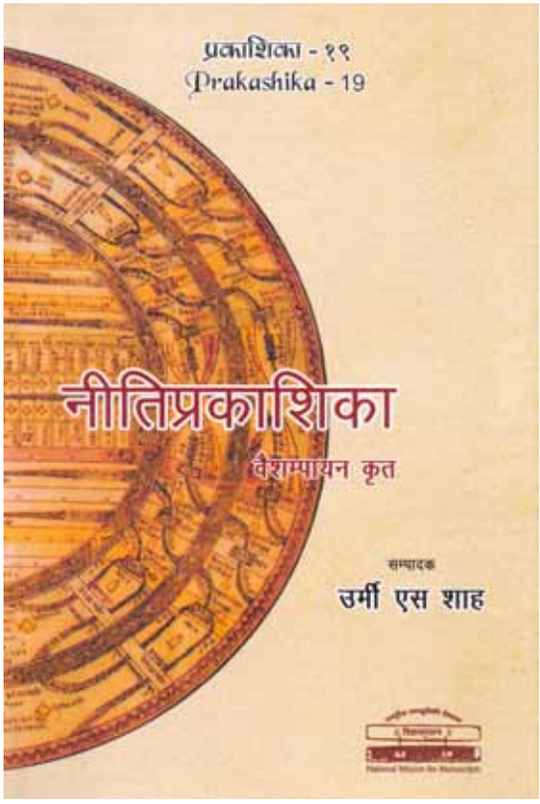

dhanurvidya scripted by sage Vaisampayana who learnt it from his *guru* Veda Vyasa and became the master of its *Taittiriya* branch and revealed it to the King, Janmejaya. The present work is a critical edition of *Nitiprakashika* of Vaisampayana with the commentary of Sitarama called *Vivritti*. This text has been prepared by Dr. Urmi S. Shah by consulting a number of manuscripts from different parts of the country. Even though it was published long before, it was not critically edited. The readers will be delighted to read this book.

The 385-page book has been co-published by National Mission for Manuscripts and D. K. Printworld (P) Ltd., New Delhi. Price – Rs. 500/-

4. Prakashika – XX: Tuhfat ul Mujahideen (Part I and Part II)

The work is a historical account of the earliest settlement of the Muslims in Kerala detailed with the account of the social background of its indigenous society. It is an earliest writing of Kerala in Arabic language following the historical tradition of the Arabs.

This work is a critical edition of original Arabic text along with translation in English, Malayalam and Hindi. It is an attempt by the historians and scholars to reproduce this classical text with its proper message of anticolonial resistance.

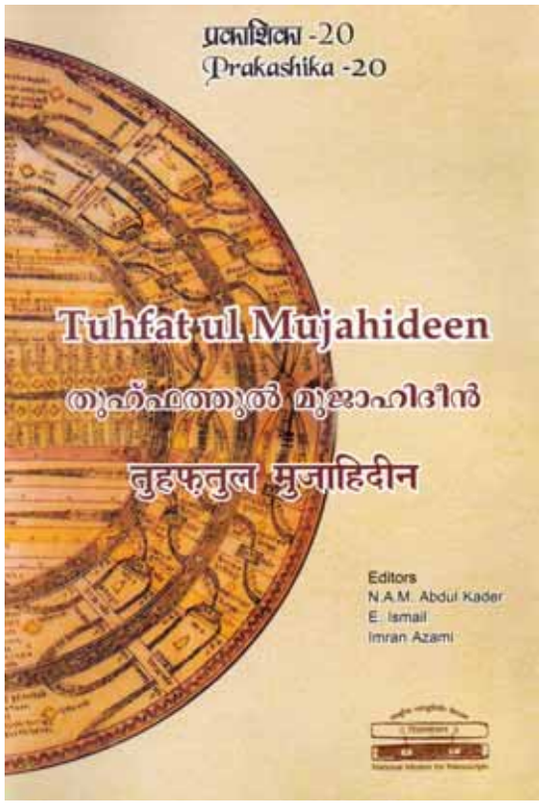

The book has been edited by Dr. K.K.N. Kurup (Coordinating Editor), Dr. N.A.M. Abdul Kader, Dr. E. Ismail and Dr. Imran Azami. This 636-page (308 + 328) book has been co-published by National Mission for Manuscripts and Asila Offset Printers, New Delhi. Price, Rs. 400/- for each part.

DIGITIZATION

Digitization project of the NMM was started in the year 2005 and since then NMM has digitized a total of 1.85 crore pages of 2.11 lakh manuscripts (upto 2013). In the current Financial Year (2014 – 2015), digitization of 85 lakh pages of manuscripts has been started. The work is in progress in full swing. This work is scheduled to be completed by the end of March 2015.

◆◆◆

could not forget their cultural traditions. When Muawiya, a companion of Prophet Muhammed, and the Governor of Damascus, appointed by Umar, the second Caliph, got an opportunity to revive the old values of Arab polity, society and culture, so he transformed it. He nominated his son Yazid as his successor without caring for the dictates of Islam, which ultimately resulted in his clash with Imam Husain. Grandson of Prophet Muhammad along with his relatives was killed by Yazid's forces who were all Muslims. None of them were Jews, Christians or pagans. History fails to produce any such example from any part of the world as was done by Muslims with the near and dear ones of their own Prophet. It shows that Umaiyads were having a great reverence to Arab culture and Islam was secondary to them. I think same values were held by Persians also. Iran was conquered by Umar and large number of non-Muslims had accepted Islam but they could not forbade their pre-Islamic cultural values which were more dearer to them. Firdausi's deep interest in Sassanian rulers and the description reflects as is stated that, "Firdausi has a unique place in Persian history because of the strides he made in reviving and regenerating the Persian language and cultural traditions. His works are cited as a crucial component in the persistence of the Persian language". Brown holds opinion that, "It is sometimes asserted that the Shah Nama contains practically no Arabic words. This is incorrect: Firdausi avoided their use as far as possible in his Epic, because he felt them to be unsuitable to the subject of his poem." Arabic language is having its own cultural values and Islam further influenced this language. Pre-Islamic or Islamic polity has no connection or relevance with the salient features of Iranian monarchy. Sassanid political, social and cultural environment does not suit to Arabic language."11 Beale writes that, "Mehmud considered himself never so much honoured as when Firdausi set his foot at Ghazni; he was never more proud than that Firdausi by his command, composing, in his faultless verse, a history of the monarchs of Persia, his predecessors."12 Beale further records that "Mehmud did not have a reward then appeared to him too great to offer, to induce the poet to undertake the task, no promise too splendid to excite him." Write, unequalled one, cried he, "and for every thousand couplets a thousand pieces of gold shall be thine "13. But the reason given by Shibli for not fulfulling the promise, was that Firdause never paid any attention towards Ayaz the slave of Mehmud, so he told Mehmud that Firdausi is a rafzi (shia)".14 This sectarian hatred had penetrated in the Muslim society. There were sectarian killings in Persia and Central Asia. Firdausi's son died at the age of thirty-seven and was mourn by the poet. He was burried in the grave yard of Muslims but when Firdausi died, so a Waiz of Tus gave a fatwa that because Firdausi was a rafzi, so can't be buried in the grave yard of Muslims. So ultimately his body was buried in his own garden. Firdausi's son must also be a rafzi, and that too Firdausi was the owner of his son's dead body but there was no hue and cry. Basically these official ulema were dictated by the monarchical moods and attitude. Now he was hated by Mehmud, so such type of hurdles and insults were done. Same incidents are also found in India during Sultanat and Mughal Period. Barani the author of Tarikh-i-Firoz Shahi, advising the Sultans not to allow non-sunnis in the

Sultanate. Mughal emperor Akbar (1556-1605 AD) had to endorse the fatwa of Shaikh Abdun Nabi, since Mu'rtaza Shirazi was a rafzi so his body should be dug out from his grave in the vicinity of Amir Khusrau's grave who was a sunni and the company of a rafzi will be uncomfortable for Khusrau. Qazi Saiyid Nurullah Shushtari's body was also not allowed to be burried in the grave yard of Muslims and his body was burried in the open agricultural land in Agra, where his tomb exists today. But it is surprising to note that he composed two verses in the praise of Hazrat Ali:-

They said: "This bard of over-fluent song
Hath loved the Prophet and Ali for long".
Protect from harm a thousand like Mehmud.

But can we hope for any noble thing.

From a slave's son, e'ev were his rise a king?

For these two verses, he was declared a rafzi and a heretic but what about those 59,998 verses which has nothing to do with Islam at all. Why the waiz, was not so courageous to pass a fatwa of heresy for Mehmud and Firdausi because both of them were responsible for the compilation of Shah Nama, a praise worthy compilation of the pre-Islamic pagan rulers of Iran. Mehmud was a force for the compilation of Shah Nama. Why Mehmud did not ask Firdausi to write about Prophet Muhammed, ahl-i-Bait and companions of Prophet Muhammed. Shah Waliullah and Allama Iqbal are also praise worthy of Mehmud. These official ulema had sold out their Islam for the wages they received from these monarchs. Firdausi was an Iranian and was having a feudal background so in Shah Nama, he laid emphasis on high genealogical status. This aspect hit Mehmud indirectly because he was also a slave and was not aware of his own genealogy. As we find in India, that Ghiyasuddin Balban (1266-1289 AD) after becoming Sultan of Delhi, arranged the compilation of his own genealogy tracing it from Afrasiyab, the ruler of Ancient Persia and later on named his grandsons as Kaiqubad and Kaikhusrau

Raza Library is having ten copies of Shah Nama. The earliest copy is dated 840/1436 AD. Eight copies of Shah Nama are illustrated and beautifully decorated.

Form No. 1 **Call No/Sr No 3909**

Subject: Poetry Rare

Accession No.: 493

S T No: 533

Old No. 290

Title of Work: Shāh Nāmah (The book of kings) -----Illustrated

Title of Work in Urdu: شاہنامہ (مصوّر)

Name of Author: Hakīm Abul Qāsim Firdausī Tūsī (d. 416AH/1025AD.)

Language: Persian

About the Manuscript: A rare beautifully decorated manuscript of celebrated Epic poem "Shāh Nāmah" by Firdausi illustrated with fine fifty two minatures, written in four colomns on each page within gold and coloured jidwal with excellent lauhs at the start of every chapter. Two folios in the beginning have broad decorated borders. Shāh Nāmah consists of 60,000 couplets narrating speccial events from the history of battles fought by fifteen ancient rulers of Persia (Iran) from Keomars to Yazdgerd and the deeds of brave heroes of their time. This masterpiece epic completed in 35 years in 384AH/994AD and is regarded as

\unique and earlier specimen of modern

persian which filled pride and national spirit in Iranian people.

Beg: بنام خدا وند جان و خرد= کزیں بر تر اندیشۂ برنگذرد

End: ہزاراں درود و ہزاراں ثنا = زما و آفریں باد--------

Lines: 25

Size: 25x14.5

Script: Nast'aliq

Age: : 840AH/1436AD

Copier Name: Mahmūd bin Muhammad bin Yūsuf A'l Tustarī popularly known as Muhammad Kāghazī

Place: Not mentioned

From whom the MS is written: Not Mentioned

Quality of Paper: Hand made paper. Colour changed to yellow

No. of Folios: 539

Condition: Worm eaten, water stained, paper pasting, previous restoration work with new guarding.

Seal if any: Erased and not readable.

Marginal Notes: No

Memory Memorandum Notes if any: On title page it is recorded that Baqar Ali khan Bareillvi had seen it, in 1870AD.

Decorative Ornaments: Beautifully decorated

Source of Receiving: Bought in 1193AH/1779AD against Rs.1...

Form No. 2 **Call No/Sr No** 3911

Subject: Poetry (Rare)

Accession No.: 491

S T No: 580

Old No. 286

Title of Work: Shāh Nāmah (The book of kings) -----Illustrated

Title of Work in Urdu: شاہنامہ (مصوّر)

Name of Author: Hakīm Abul Qāsim Firdausī Tūsī (d. 416AH/1025AD.)

Language: Persian

About the Manuscript: Another rare decorated manuscript of Shāh Nāmah illustrated with fine 32 paintings out of which seven are larger in size in the beginning on both sides of folios 1a to 4a. While 25 paintings which are smaller in size on other folios . Preface starts from folio 4b written in gold, within gold and coloured jidwal and floral border with beautiful lauh. The text is written in four columns on each folios and some where on margins also with in gold and coloured jidwal. Headings are written by red ink. Manuscript is laminated by National Archives of India on 14/11/1960 as its clear from the by seal. Some folios are charred and some are decayed on the sides.

Beg: افتتاح سخن آں بہ کہ کنند امال کمال----- بہ ثنای ملک العرش خدائ متعال

End: ہزاراں درود و ہزاراں صلات= زما بـاد بـر خواجہ کائنات

Lines: 24

Size: 43x25

Script: Nast'aliq

Age: : 1011AH/1602AD

Copier Name: Ghiyāsuddin bin Abdul Qādir bin Abi Ishāq

Place: Not mentioned

From whom the MS is written: Ashraf Ali

Quality of Paper: Hand made paper. Colour changed to yellow

No. of Folios: 431

Condition: Worm eaten, water stained, paper pasting, previous restoration work with new guarding.

Seal if any: Reads as Badarud Daulah Shujaul Mulk Muhammad S'aādat Mand Khan Bahādur Asad Jang 1239AH.

Marginal Notes: No

Memory Memorandum Notes if any: The manuscript was also the part of the library of Farrukhabad.

Decorative Ornaments: Beautifully decorated

Source of Receiving: No

Date of Receiving: NoN

Form No. 3 **Call No/Sr No** 3912

Subject: Poetry Rare

Accession No.: 6682

S T No: 2429

Old No. Nil

Title of Work: Shāh Nāmah (The book of kings)

Title of Work in Urdu: شاہنامہ

Name of Author: Hakīm Abul Qāsim Firdausī Tūsī (d. 416AH/1025AD.)

Language: Persian

About the Manuscript: Another rare decorated manuscript of Shāh Nāmah written in four columns on each page within gold and black jidwal with gold and coloured lauh. Headings are with red ink. On last two folios the couplets are written diagonally in squars drawn. Manuscript is laminated by National Archives of India on 14/11/1960. Paper has decayed on the sides.

Beg: بنام خدا وند جان و خرد= کزیں بر تر اندیشۂ برنگذرد

End: ہزاراں درود و ہزاراں سلام = زما بر محمد علیہ السلام

Lines: 23

Size: 36.5x20.5

Script: Nast'aliq

Age: : 1032AH/1622AD

Copier Name: Not mentioned

Place: Not mentioned

From whom the MS is written: For Sultān Muhammad Qutub Shah, ruler of Golkunda (1020-35AH/1611-25AD.

Quality of Paper: Hand made paper. Colour changed to yellow

No. of Folios: 588

Condition: Worm eaten, water stained, paper pasting, previous restoration work with new guarding.

Seal if any: No

Marginal Notes: No

Memory Memorandum Notes if any: No

Decorative Ornaments: No

Source of Receiving: No

Date of Receiving: No

Form No. 4 **Call No/Sr No** 3913

Subject: Poetry Rare

Accession No.: 492

S T No: 620

Old No. Nil

Title of Work: Shāh Nāmah (The book of kings)----- (Illustrated) compiled in 384AH/994AD.

Title of Work in Urdu: شاہنامہ (مصوّر)

Name of Author: Hakīm Abul Qāsim Firdausī Tūsī (d. 416AH/1025AD.)

Language: Persian

About the Manuscript: Other beautifully decorated manuscript of Shāh Nāmah illustrated with fine 34 miniature paintings in between the folios. Preface is upto folio 5a within gold and coloured jidwal and border with gold and coloured lauh. The text of Shāh Nāmah also begins with excellent gold coloured lauh, jidwal and border. On two beginning folios heading is with white colour on golden background. The text is written in coloumner form seprated with floral decorated verticle lines, headings with red and gold out line. At many places couplets are written in squars. The folios are charred at various places.

Beg: ســپاس و آفرین خدای را کہ جہاں و آں جہاں را آفریدہ بندگان را اندر جہاں بدید

End: ہزاراں تحیات و مدح و ثنا= زماتن بتن باد بر مصطفی

Lines: 25

Size: 35.5x20.5

Script: Nast'aliq

Age: : Not mentioned

Copier Name: Not mentioned

Place: Not mentioned

From whom the MS is written: Not mentioned

Quality of Paper: Hand made paper. Colour changed to yellow

No. of Folios: 638

Condition: Worm eaten, water stained, paper pasting, previous restoration work with new guarding.

Seal if any: No

Marginal Notes: No

Memory Memorandum Notes if any: No

Decorative Ornaments: No

Source of Receiving: No

Date of Receiving: No

Form No. 5 **Call No/Sr No** 3914

Subject: Poetry Rare

Accession No.: 4756

S T No: 2360

Old No. 294

Title of Work: Shāh Nāmah (The book of kings)----- (Illustrated) compiled in 384AH/994AD.

Title of Work in Urdu:) شاہنامہ (مصوّر

Name of Author: Hakīm Abul Qāsim Firdausī Tūsī (d. 416AH/1025AD.)

Language: Persian

About the Manuscript: Rare manuscript ofShāh Nāmah which consists of its 3rd and4th parts. The third part contains the description about the war between the king of Iran and china the Chāsps shah and Gashtāsp Shah which is upto folio 193a. Then two folios are blank and in between there is a minature paintings. From folios 197 to 256 the description about famous king Nausherwan-i-'Aadil is written.

Beg: بسم اللہ------- ناز گشتن فردوسی از سخن دقیقے بہ سخن خویش کنوں ایں سخنگوی بیدار معز

End: مہ بہمن و آسماں روز بود کہ کلکم بدیں- دینارم نمود بریں

Lines: 12

Size: 31x17.5

Script: Nast'aliq

Age: 1108AH/1696AD.

Copier Name: Not mentioned

Place: Not mentioned

From whom the MS is written: Not mentioned

Quality of Paper: Hand made paper. Colour changed to yellow

No. of Folios: 256

Condition: Worm eaten, water stained, paper pasting, previous restoration work with new guarding.

Seal if any: No

Marginal Notes: No

Memory Memorandum Notes if any: No

Decorative Ornaments: No

Source of Receiving: No

Date of Receiving: No

Form No. 6 **Call No/Sr No** 3915

Subject: Poetry Rare

Accessiont No.: 7341

S T No: 621

Old No. 995

Title of Work: Shāh Nāmah (The book of kings)----- (Illustrated) compiled in 384AH/994AD.

Title of Work in Urdu:) مصوّر) شاہنامہ

Name of Author: Hakīm Abul Qāsim Firdausī Tūsī (d. 416AH/1025AD.)

Language: Persian

About the Manuscript: A beautiful decorated and rare manuscript of Shāh Nāmah (part ivth) with 32 miniature paintings, is written in four coloumns on each page and four excellently decorated lauhs on folios 1b,144b, 259b and 411b. After folio 1,3 folios are blank and after folio 410 two foliosare blank. On folio 411b after lauh nothing is written folios 258b and 259a are also blank.

Beg: بنام خدا وند جان و خرد= کزیں بر تر اندیشۂ برنگذرد

End: ہجرت سہ سال ہفتاد دو چار= بنام جہاں داور کرد گار- تحریر یافت دفتر چہارم تمام شد

Lines: 23

Size: 31x19

Script: Nast'aliq

Age: Not mentioned

Copier Name: 1245/1246AH/1829/1830AD

Place: Not mentioned

From whom the MS is written: Not mentioned

Quality of Paper: Hand made paper. Colour changed to yellow

No. of Folios: 500

Condition: Very bad, worm eaten, water stained, paper pasting, previous restoration work with new guarding.

Seal if any: No

Marginal Notes: No

Memory Memorandum Notes if any: A note shows that the manuscript became the asset Raza library on 21 october 1935AD.

Decorative Ornaments: Yes

Source of Receiving: No

Date of Receiving: No

Form No. 7 **Call No/Sr No** 3916

Subject: Poetry Rare

Accessiont No.: 494

S T No: 573

Old No. 289

Title of Work: Shāh Nāmah (The book of kings)----- (Illustrated) compiled in 384AH/994AD.

Title of Work in Urdu:) مصوّر) شاہنامہ

Name of Author: Hakīm Abul Qāsim

Firdausī Tūsī (d. 416AH/1025AD.)

Language: Persian

About the Manuscript: A beautifully decorated illustrated copy of handwritten Shāh Nāmah (manuscript) with 72 minature paintings , out of which 3 in the beginning are big in size while others are smaller. The text is written in four columns on each page, seperated with vertical reddish and blue designed lines.The writing is within gold and coloured jidwal with black barika and with excellently decorated floral lauhs. Headings are with gold on black background some portion is written in squars. First part of the manuscript ends on folio 169b and is copied in 1245AH/1829AD. Second part starts from folio 170b with a lauh which ends on 327, Third part starts with a lauh from folio 328b and ends on 475a, after two blank folios fourth part starts with lauh from 476 and ends on folio 557. This part was written in 1246AH/1830AD, with in jidwal and barika.

Beg: بنام خدا وند جان و خرد= کزیں بر تر اندیشۂ برنگذرد

End: زہجرت سہ صد سال ہفتاد دو چار= بنام جہاں داور کرد گار

Lines: 25

Size: 29.5x18

Script: Nast'aliq

Age: Not mentioned

Copier Name: 1245/1246AH/1829/1830AD

Place: Not mentioned

From whom the MS is written: Not mentioned

Quality of Paper: Hand-made paper. Colour changed to yellow

No. of Folios: 557

Condition: Very good.

Seal if any: State library Rampur 1268AH.

Marginal Notes: No

Memory Memorandum Notes if any: No

Decorative Ornaments: No

Source of Receiving: No

Date of Receiving: No

Form No. 8 **Call No/Sr No** 3917

Subject: Poetry Rare

Accession No.: 490

S T No: 340

Old No. Nil

Title of Work: Shāh Nāmah (The book of kings)------ (Illustrated) compiled in 389AH.

Title of Work in Urdu) شاہنامہ (مصوّر)

Name of Author: Hakīm Abul Qāsim Firdausī Tūsī (d. 416AH/1025AD.)

Language: Persian

About the Manuscript: A beautifully decorated copy of hand written Shāh Nāmah (manuscript) with 66 miniatures out of which two are bigger on folios 4b & 5a while others are smaller in size . Preface of the book is upto folio 7a then folios 7b and 8a are blank. The text of Shāh Nāmah is written in four coloumns seperated with gold verticle lines within gold and coloured jidwal and black barika with gold and coloured lauh. Headings are written by red ink.

Beg: بسم اللہ------- سپاس و آفریں و خدای را کہ اینجہاں و آن جہاں آفرید

End: لا الہ الا اللہ----- چو خواہشکری ونیازم نمود= بریں بہ بستم زباں بر کشود محمد رسول اللہ

Lines: 26

Kriti Rakshana

Size: 36.2x29.5

Script: Nast'aliq

Age: 1240AH/1824AD

Copier Name: Nūr Ahmad son of Mian Muhammad Saeed

Place: Lahore

From whom the MS is written: Not mentioned

Quality of Paper: Hand made paper. Colour changed to yellow

No. of Folios: 593

Condition: Good, slightly worm eaten.

Seal if any: State library Rampur 1268AH.

Marginal Notes: No

Memory Memorandum Notes if any: No

Decorative Ornaments: Yes

Source of Receiving: No

Date of Receiving: No

Form No. 9 **Call No/Sr No** 3918

Subject: Poetry Rare

Accession No.: 4757

S T No: 345

Old No. 292

Title of Work: Shāh Nāmah (The book of kings) -------(Illustrated)

Title of Work in Urdu) شاہنامہ (مصوّر)

Name of Author: Hakīm Abul Qāsim Firdausī Tūsī (d. 416AH/1025AD.)

Language: Persian

About the Manuscript: An illustrated manuscript of Shāh Nāmah with ten minature paintings, out of which two are larger on full page in the beginning , in preface, while other eight are smaller in size . The preface is upto folio 7a. The text of Shāh Nāmah starts from folio 8b written in four coloumns. Headings are written by red ink.

Beg: بسم اللہ------- سپاس و آفریں خدای را کہ اینجہاں و آں جہاں آفرید

End: چو خواہشکری ونیازم نمود= بریں بر بستم زباں بر کشود

Lines: 21

Size: 29.5x19

Script: Nast'aliq

Age: 1254AH/1838AD

Copier Name: Saiyid Amir Shah Rampuri

Place: Rampur

From whom the MS is written: Not mentioned

Quality of Paper: Hand-made paper. Colour changed to yellow

No. of Folios: 730

Condition: Worm eaten, water stained, paper pasting, previous restoration work with new guarding.

Seal if any: No

Marginal Notes: No

Memory Memorandum Notes if any: No

Decorative Ornaments: No

Source of Receiving: No

Date of Receiving: No

Form No. 10 **Call No/Sr No** 3919

Subject: Poetry Rare

Accession No.: 12724

S T No: 2361

Old No. Nil

Title of Work: Shāh Nāmah (The book of kings) vol. 1

Title of Work in Urdu: شاہنامہ (جلد اوّل)

Name of Author: Hakīm Abul Qāsim Firdausī Tūsī (d. 416AH/1025AD.)

Language: Persian

About the Manuscript: Rare manuscript of Shāh Nāmah. In the beginning some folios are missing last four folios of the preface are there. Text is written in two columns on a page , somewhere written on margins also. Headings are with red ink. Condition of the manuscript is not good and most of the folios sides are decayed.

Beg: مولانا ابوالقاسم طوسی کہ سلطان محمود لقب او فردوسی کرد

End: نہ زین شاد باشد نہ زاں مستمند= چنیں است کردار چرخ بلند

Lines: Different

Size: 24.5x13

Script: Nast'aliq

Age: Not mentioned

Copier Name: Not mentioned

Place: Not mentioned

From whom the MS is written: Not mentioned

Quality of Paper: Hand-made paper. Colour changed to yellow

No. of Folios: 368

Condition: Very bad, worm eaten, water stained, paper pasting, previous restoration work with new guarding.

Seal if any: No

Marginal Notes: No

Memory Memorandum Notes if any: No

Decorative Ornaments: No

Source of Receiving: No

Date of Receiving: No

References

1. Thomas William Beale–An Oriental Biographical Dictionary, London, 1894, P.134.
2. Richard N. Frye – The Golden Age of Persia, Weidenfield, 1975, P.200.
3. Cyrus Ghani – Iran and the Rise of Reza Shah: from Qajar Collapse to Pahlavi rule, P.400.
4. Shibli Nomani – Shairul Ajam – 1909. P.131.
5. ibid. p.127
6. ibid. pp.173, 174
7. ibid. p.100
8. Dick Dauis – Shah Nama: The Persian Book of Kings, Viking Penguin, 2006. PXXIII
9. E.G. Brown - A Literary History of Persia. Vol. II pp.143, 144.
10. Maulana S.A Naqi – Tarikh-i-Islam, Aligarh, 2012, p.404.
11. ibid. P.144
12. Beale op.cit.pp. 134, 135
13. ibid .P.135
14. Shibli op.cit. p110

Prof. S.M. Azizuddin Husain is Director, Rampur Raza Library, Rampur (UP)

Publications of the NMM

TATTVABODHA

Compilation of the proceedings of public lectures delivered under Tattvabodha Series

***TATTVABODHA* VOLUME–I**
Editor: Sudha Gopalakrishnan
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi and Munshiram Manoharlal Publishers Pvt. Ltd, New Delhi
Pages: 164 **Price:** ₹ 325/-

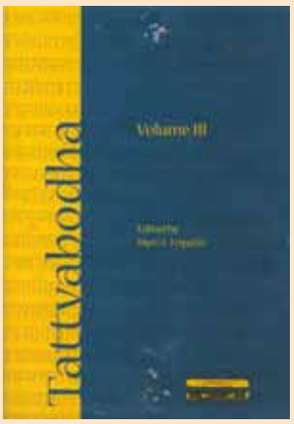

***TATTVABODHA* VOL–III**
Editor: Prof. Dipti S. Tripathi
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi and Dev Books, New Delhi
Pages: 240 **Price:** ₹ 350/-

***TATTVABODHA* VOLUME–II**
Editor: Kalyan Kumar Chakravarty
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi and Munshiram Manoharlal Publishers Pvt. Ltd. New Delhi
Pages: 194 **Price:** ₹ 350/-

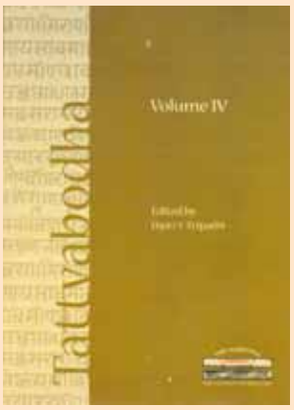

***TATTVABODHA* VOLUME–IV**
Editor: Prof. Dipti S. Tripathi
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi and D. K. Printworld (P.) Ltd.
Pages: 251
Price: ₹ 400/-

SAMRAKSHIKA

Compilation of the proceedings of the seminars on conservation of manuscripts

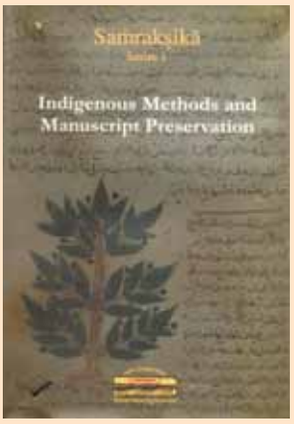

***SAMRAKSHIKA* VOLUME–I**
Indigenous Methods of Manuscript Preservation
Editor: Sudha Gopalakrishnan
Volume Editor: Anupam Sah
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi and D. K. Printworld (P) Ltd., New Delhi
Pages: 253
Price: ₹ 350/-

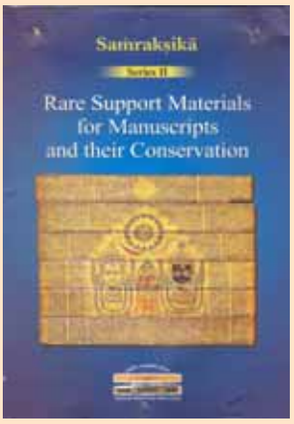

***SAMRAKSHIKA* VOLUME–II**
Rare Support Materials for Manuscripts and their Conservation
Editor: Shri K. K. Gupta
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi and Dev Books, New Delhi
Pages: 102
Price: ₹ 200/-

Kriti Rakshana

SAMIKSHIKA

Compilation of the proceedings of the seminars organised on different topics

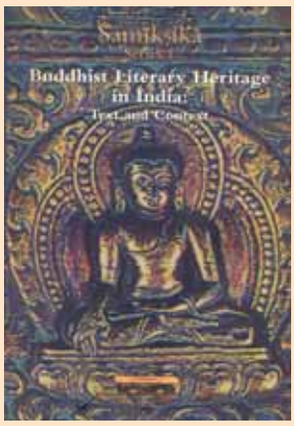

***SAMIKSHIKA* VOLUME–I**
Buddhist Literary Heritage in India
Editor: Prof. Ratna Basu
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi and Munshiram Manoharlal Publishers Pvt. Ltd., New Delhi
Pages: 158
Price: ₹ 325/-

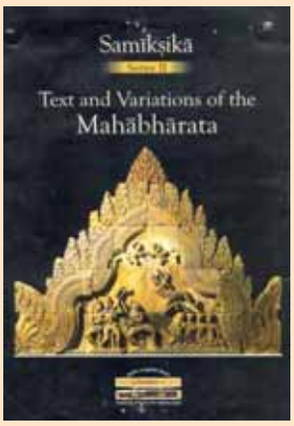

***SAMIKSHIKA* VOLUME-II**
Text and Variantions of the Mahābhārata
Editor: Kalyan Kumar Chakravarty
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi and Munsiram Manoharlal Publishers (P) Ltd., New Delhi
Pages: 335
Price: ₹ 500/-

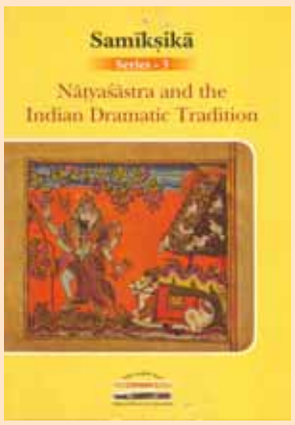

***SAMIKSHIKA* VOLUME-III**
Natyashastra and the Indian Dramatic Tradition
Edited by: Radhavallabh Tripathi
General Editor: Dipti S. Tripathi
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi and Dev Publishers & Distributors, New Delhi
Pages: 344
Price: ₹ 450/-

***SAMIKSHIKA* VOLUME-IV**
Indian Textual Heritage (Persian, Arabic and Urdu)
Editor: Prof. Chander Shekhar
Publishers: National Mission for Manuscripts,
New Delhi and Dilli Kitab Ghar, Delhi
Pages: 400
Price: ₹ 350/-

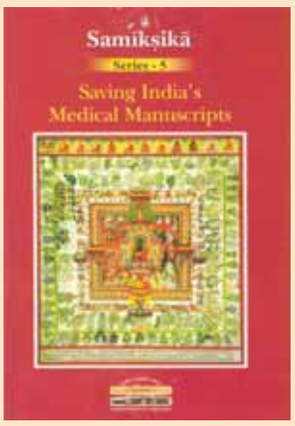

***SAMIKSHIKA* VOLUME-V**
Saving India's Medical Manuscripts
Edited by: G.G. Gangadharan
General Editor: Dipti S. Tripathi
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi and Dev Publishers & Distributors, New Delhi
Pages: 260
Price: ₹ 350/-

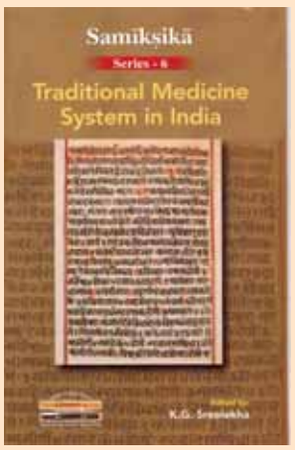

SAMIKSHIKA VOLUME-VI
Traditional Medicine System in India
General Editor: Prof. P. K. Mishra
Editor: Dr. K. G. Sreelekha
Publishers: Mational Mission for Manuscripts, New Delhi and Dev Publishers & Distributors, New Delhi
Pages: 170
Price: ₹300/-

Kriti Rakshana

KRITIBODHA

Critical editions of manuscripts

***KRITIBODHA* VOLUME-I**
Vādhūla Gṛhyāgamavṛttirahasyam of Nārāyaṇa Miśra
Critically edited by: Braj Bihari Chaubey
General editor: Sudha Gopalakrishnan
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi and D. K. Printworld (P) Ltd., New Delhi
Pages: 472
Price: ₹ 550/-

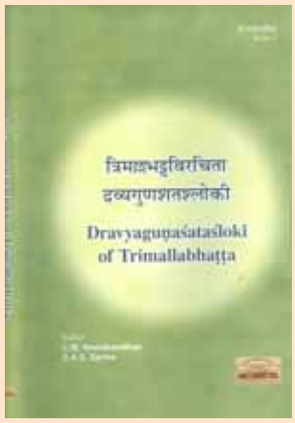

***KRITIBODHA* VOLUME-V**
Dravyaguṇaśataślokī of Trimallabhaṭṭa
Editor: Dr. C.M. Neelakandhan & Dr. S. A. S. Sarma
General Editor: Prof. Dipti S. Tripathi
Publishers: NMM & Nag Publishers, Delhi
Pages: 136
Price: ₹ 250-

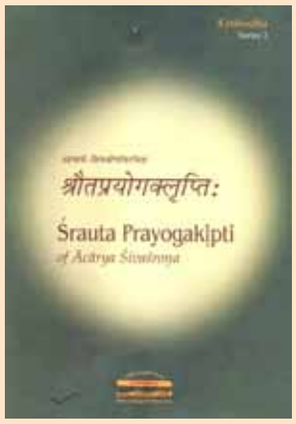

***KRITIBODHA* VOLUME-II**
Śrauta Prayogakḷpti of Ācārya Śivaśroṇa
Editor: Prof. Braj Bihari Chaubey
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi and D. K. Printworld (P) Ltd., New Delhi
Pages: 200
Price: ₹ 250/-

***KRITIBODHA* VOLUME-III**
Tattvānusandhanam (A Compendium of Advaita Philosophy) by Sri MahadevanandaSarasvati
Consultant Editor: T. V. Sathyanarayana
General Editor: Prof. Dipti S. Tripathi
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi and New Bharatiya Book Corporation, Delhi
Pages: 90
Price: ₹ 150/-

***KRITIBODHA*, VOLUME – IV**
Śrījonarājkṛta Kirātārjunīyaṭīkā
Editor: Dr. Dharmendra Kumar Bhatt
Consultant Editor: Prof. Vasant Kumar M. Bhatt
General Editor:
Prof. Dipti S. Tripathi
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi & Nag Publishers, New Delhi
Pages: 338
Price: ₹ 250/-

Kriti Rakshana

PRAKASHIKA

Printed editions of rare and unpublished manuscripts

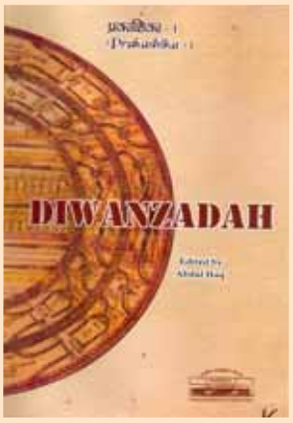

***PRAKASHIKA* VOLUME-I**
Diwanzadah
Edited by: Prof. Abdul Haq
General Editor: Prof. Dipti S. Tripathi
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi and Delhi Kitab Ghar, Delhi
Pages: 454
Price: ₹ 250/-

***PRAKASHIKA* VOLUME-II**
Chahar Gulshan (An eighteenh century gazetteer of Mughal India)
Edited and Annotated by: Chander Shekhar
General Editor: Dipti S. Tripathi
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi and Dilli Kitab Ghar, Delhi
Pages: 473
Price: ₹ 250/-

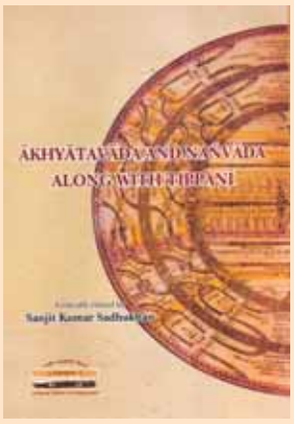

***PRAKASHIKA* VOLUME – III**
Ākhyātavāda and Nañvāda along with Ṭippanī Critically Edited by Sanjit Kumar Sadhukhan
General Editor: Prof. Dipti S. Tripathi
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi and Dev Publishers & Distributers, New Delhi
Pages: 127
Price: ₹ 250/-

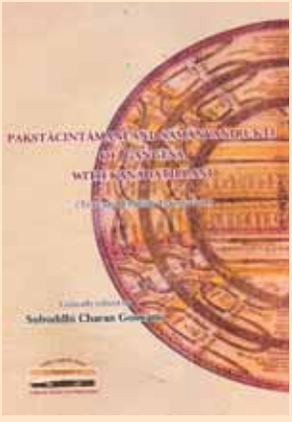

***PRAKASHIKA* VOLUME-IV**
Pakṣtācintāmaṇi and Sāmānyanirukti of Gaṅgeśa with Kaṇādaṭippani (Text and English Translation)
Critically Edited by Subuddhi Charan Goswami
General Editor: Prof. Dipti S. Tripathi
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi and Dev Publishers & Distributors
Pages: 113
Price: ₹ 225/-

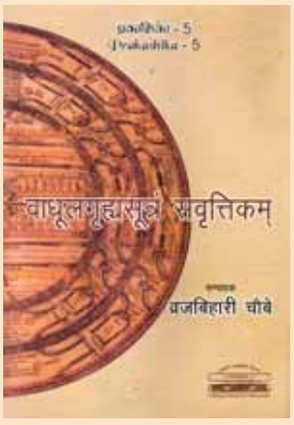

***PRAKASHIKA* VOLUME-V**
Vādhulagṛhyasuṭram with Vṛtti
Critically Edited by: Braj Bihari Chaubey
General Editor: Dipti S. Tripathi
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi and New Bharatiya Book Corporation, New Delhi
Pages: 262
Price: ₹ 350/-

Kriti Rakshana

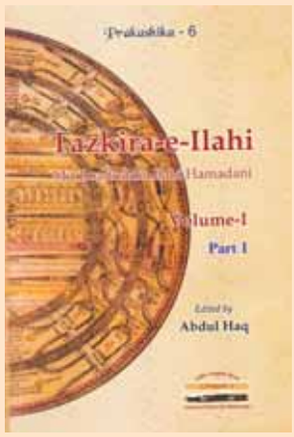

***PRAKASHIKA*, VOLUME VI (Part I & II)**
Tazkira-e-Ilahi of Mir Imaduddin Ilahi Hamdani
(Facsimile Edition)
Editor: Prof. Abdul Haq
General Editor: Prof. Dipti S. Tripathi
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi & Dev Publishers & Distributors, New Delhi
Pages: 436 + 347 = 783
Price: ₹ 2,000/- (for two parts)

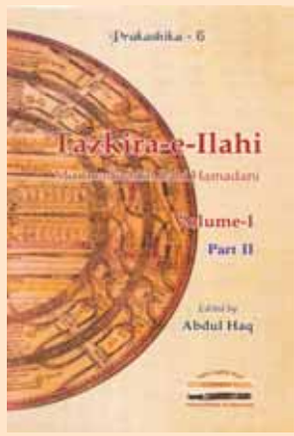

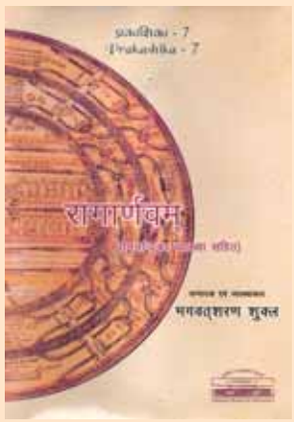

***PRAKASHIKA* VOLUME-VII**
Rāgārṇavam (with Rāgacandrikā Vyākhyā)
Edited and commented by: Bhagavatsharan Shukla
General Editor: Prof. Dipti S. Tripathi
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi and D. K. Printworld (P.) Ltd.
Pages: 251
Price: ₹ 300/-

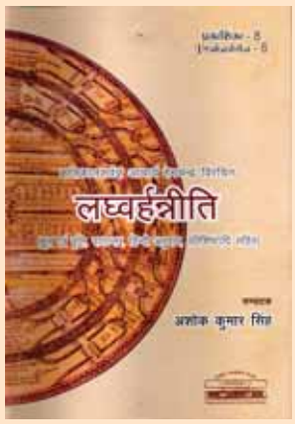

***PRAKASHIKA* VOLUME-VIII**
Kalikālasarvajña Ācārya hemcandra's Laghvarhannīti
(Text with commentary, variant readings, Hindi translation and appendices)
Editor: Ashok Kumar Singh
General Editor: Prof. Dipti S. Tripathi
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi and New Bharatiya Book Corporation, New Delhi
Pages: 314
Price: ₹ 350/-

***PRAKASHIKA*, VOLUME X**
Abhijñānaśakuntalam with Sandharbhadīpika of Chandrasekhar Chakravarty
Editor: Prof. Vasantkumar M. Bhatt
General Editor: Prof. Dipti S. Tripathi
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi & New Bhartiya Book Corporation, New Delhi
Pages: 262
Price: ₹ 300/-

***PRAKASHIKA* VOLUME–IX**
(1st Part & 2nd Part)
Mir'at-ulIstelah of Anand Ram Mukhlis
Edited by: Chander Shekhar, Hamidreza Ghelichkani & Houman Yousefdahi
General Editor: Prof. Dipti S. Tripathi
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi and DilliKitabGhar, Delhi
Pages: 566 + 403
Price: ₹ 400/- each

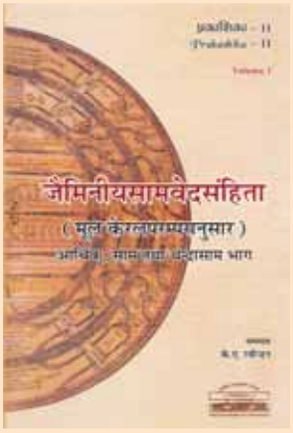

***PRAKASHIKA*, VOLUME XI (Part 1 & 2)**
Jaiminiyasamavedasamhita Text of Kerala Tradition
(Arcika, Sama and Candrasama Portions)
Editor: Dr. K. A. Rabindran
General Editor: Prof. Dipti S. Tripathi
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi &
Nag Publishers, Delhi
Pages: 206 + 413 = 619
Price: ₹ 600/- (for two parts)

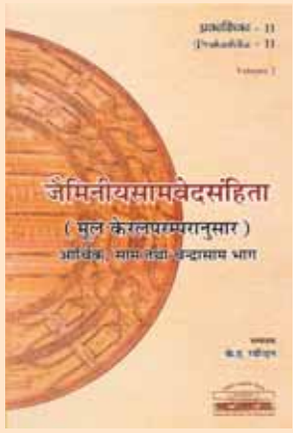

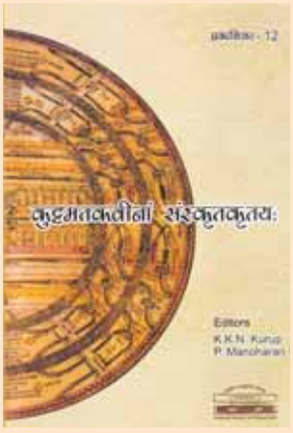

***PRAKASHIKA*, VOLUME XII**
Sanskrit Manuscripts of Kuṭṭamatt Family of Kasargod
Editors: Dr. K. N. Kurup& Dr. P. Manoharan
General Editor: Prof. Dipti S. Tripathi
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi & New Bhartiya Book Corporation, New Delhi
Pages: 279
Price: ` 300/-

***PRAKASHIKA*, VOLUME XV**
Natyacudamani of Somanarya (With Telugu Commentary)
General Editor: Prof. Dipti S. Tripathi
Editor: Dr. V. Premalatha
Publishers: National Mission for Manuscripts and
Dev Publishers & Distributors, New Delhi
Pages: 442
Price: ` 480/-

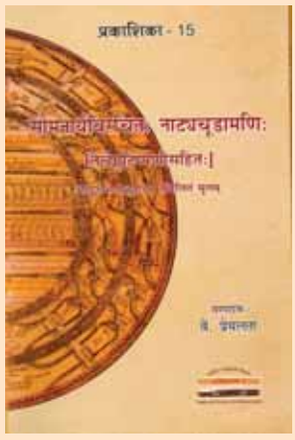

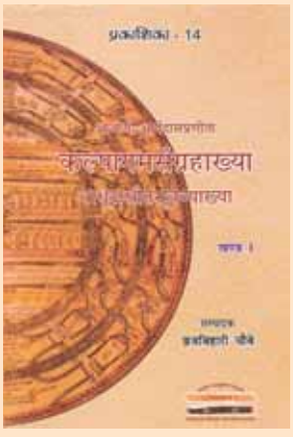

***PRAKASHIKA*, VOLUME XIV**
Ācārya Āryadāsapranītā Kalpāgamasamgrāhakhyā Vādhūlaśrautasutasūtravyākhyā
Editor: Prof. Braj Bihari Chaubey
General Editor: Prof. Dipti S. Tripathi
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi &
Dev Publishers & Distributors, New Delhi
Pages: 300 + 429 = 729
Price: ₹ 650/- (for two parts)

PRAKASHIKA – XVIII
Sanskrit Kathakali Works of Virakeralavarma,Sitaharanam and Nalacharitam (first Day's Story)
Editor: Dr. C. M. Nilakandhan & Dr. K. M. Seeja
General Editor: Prof. P. K. Mishra
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi & Nag Publishers, Delhi
Pages: 300
Price: ₹ 350/-

PRAKASHIKA – XIX
Nitiprakashika of Vaisampayana
General Editor: Prof. P. K. Mishra
Editor: Dr. Urmi S. Shah
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi and D. K. Printworld, New Delhi
Pages: 385
Price: ₹ 500/-

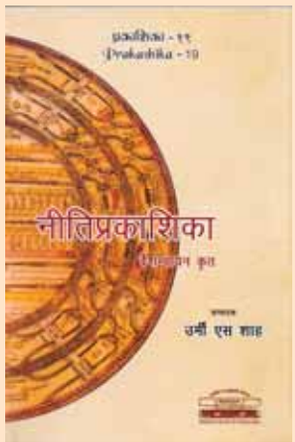

Kriti Rakshana

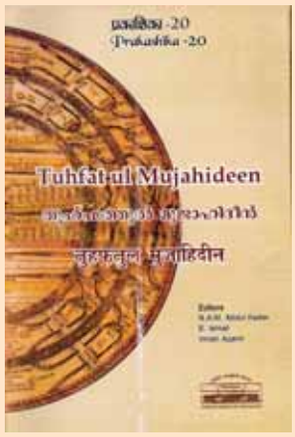

PRAKASHIKA – XX (Part I and Part II)
Tuhfat ul Mujahideen
General Editor: Prof. P. K. Mishra
Editors: Dr. N.A. M. Abdul Kader,
Dr. E. Ismail & Dr. Imran Azami
Co-ordinating Editor: Dr. K.K.N. Kurup
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi and Asila Offset Printers, New Delhi
Pages: 308 + 328 = 636
Price: 400/- each part

CATALOGUES

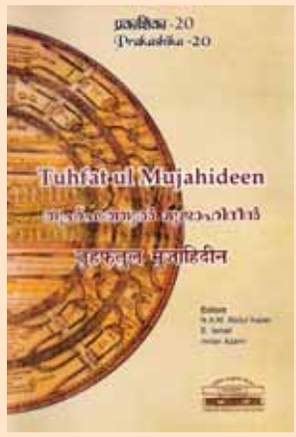

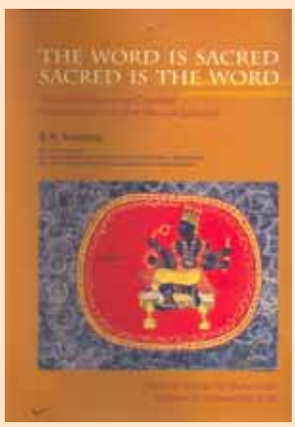

THE WORD IS SACRED SACRED IS THE WORD
The Indian Manuscript Tradition by B. N. Goswamy
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi and Niyogi Offset Pvt. Ltd., New Delhi
Pages: 248
Price: ₹ 1850/-

SHABAD GURU
Illustrated Catalogue of Rare Guru Granth Sahib Manuscripts
Editor: Dr. Mohinder Singh
Publishers: National Mission for Manuscripts, New Delhi and National Institute of Punjab Studies, New Delhi
Pages: 193

VIJÑĀNANIDHI: MANUSCRIPT TREASURES OF INDIA
Published by: National Mission for Manuscripts, New Delhi
Pages: 144

A DESCRIPTIVE CATALOGUE OF PERSIAN TRANSLATIONS OF INDIAN WORKS
Editor: Prof. Sherif Husain Qasemi
General Editor: Prof. Dipti S. Tripathi
Publishers: NMM & Asila Offset Printers, New Delhi
Pages: 310
Price: ₹ 500/-

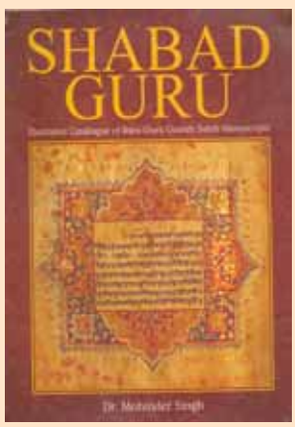

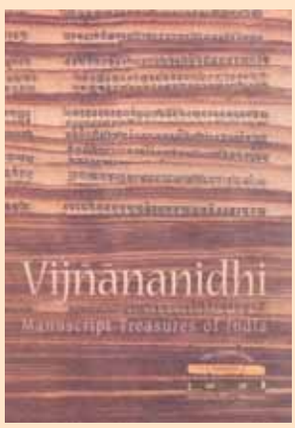

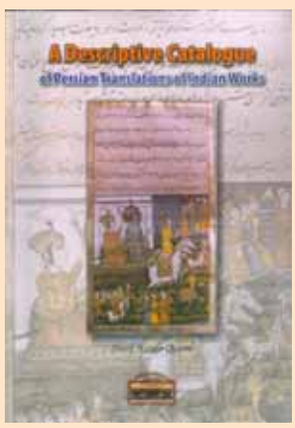

राष्ट्रीय पाण्डुलिपि मिशन
॥ विज्ञानमुपास्व ॥
National Mission for Manuscripts